भारत सरकार
भारत का विधि आयोग

रिपोर्ट सं. 245

बकाया और पिछला ढेर : अतिरिक्त न्यायिक मानव शक्ति का सृजन

जुलाई, 2014

बीसवें विधि आयोग का गठन विधि कार्य विभाग, विधि और न्याय मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली द्वारा जारी आदेश सं. ए-45012/1/2012-प्रशा.-III (एल.ए.) तारीख 8 अक्तूबर, 2012 द्वारा 1 सितंबर, 2012 से तीन व-र् की अवधि के लिए किया गया ।

विधि आयोग पूर्णकालिक अध्यक्ष, चार पूर्णकालिक सदस्य (सदस्य सचिव सहित), दो पदेन सदस्य और पांच अंशकालिक सदस्यों से मिलकर बना है ।

अध्यक्ष

माननीय न्यायमूर्ति ए. पी. शहा

पूर्ण कालिक सदस्य

न्यायमूर्ति एस. एन. कपूर
प्रो. (डा.) मूलचंद शर्मा
न्यायमूर्ति ऊना मेहरा
श्री एन. एल. मीणा, सदस्य सचिव

पदेन सदस्य

श्री पी. के. मल्होत्रा, सचिव (विधायी विभाग और विधि कार्य विभाग)

अंशकालिक सदस्य

प्रो. (डा.) जी. मोहन गोपाल
श्री आर. वेंकटरमणी
प्रो. (डा.) योगेश त्यागी
डा. विजय नारायण मणि
प्रो. (डा.) गुरजीत सिंह

विधि आयोग
14वें तल, हिंदुस्तान टाइम्स हाउस,
के. जी. मार्ग,
नई दिल्ली - 110001 पर स्थित है ।

सदस्य सचिव

श्री एन. एल. मीणा

अनुसंधान अधिकारी

डा. (श्रीमती) पवन शर्मा	:	संयुक्त सचिव और विधि अधिकारी
श्री ए. के. उपाध्याय	:	अपर विधि अधिकारी
श्री एस. सी. मिश्र	:	उप विधि अधिकारी
डा. वी. के. सिंह	:	उप विधि अधिकारी

इस रिपोर्ट का पाठ http://www.lawcommissionofindia.nic.in
इंटरनेट पर उपलब्ध है ।

© भारत सरकार
भारत का विधि आयोग

न्यायमूर्ति अजित प्रकाश शहा
भूतपूर्व मुख्य न्यायाधीश, दिल्ली उच्च न्यायालय
अध्यक्ष
भारत का विधि आयोग
भारत सरकार
हिन्दुस्तान टाइम्स हाउस
कस्तूरबा गांधी मार्ग, नई दिल्ली - 110001
दूरभाा : 23736758 फैक्स : 23355741

Justice Ajit Prakash Shah
Former Chief Justice of Delhi High Court
Chairman
Law Commission of India
Government of India
Hindustan Times House
K.G. Marg, New Delhi-110 001
Telephone : 23736758, Fax : 23355741

अ.शा. सं. 6(3)224/2012-एल.सी.(एल.एस.) तारीख : 7 जुलाई, 2014

प्रिय श्री रवि शंकर प्रसाद जी,

कृपया **बकाया और पिछला ढेर : अतिरिक्त न्यायिक मानव शक्ति का सृजन** वि-नय पर रिपोर्ट सं. 245 प्राप्त करें ।

रिपोर्ट का फोकस अतिरिक्त न्यायिक मानव शक्ति की आवश्यकता और उसके अधिकतम उपयोग की परीक्षा करना और सुझाव देना है ।

रिपोर्ट व्यापकतः माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा प्रेरित है जब **इम्तियाज अहमद** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**, 2012 की दांडिक अपील सं. 254 - 262 [एस.एल.पी. (क्रिमि.) सं. 1581-1598/2009 से उद्भूत] वाले मामले में, उस न्यायालय ने विधि आयोग से विलंब को दूर करने, बकाया मामलों का शीघ्र निपटान करने और लागत में कमी लाने में सहायता के लिए अतिरिक्त न्यायालयों के सृजन के संबंध में अनुसंधान करने और अपनी सिफारिशें प्रस्तुत करने के लिए कहा ।

मैं यह आशा करता हूं कि यह रिपोर्ट सरकार को न्यायिक सुधार से संबंधित अपनी नीति विरचित करने में कुछ सहायक होगी ।

सादर,

भवदीय
ह0/-
(**अजित प्रकाश शहा**)

श्री रवि शंकर प्रसाद,
माननीय विधि और न्याय मंत्री,
भारत सरकार
शास्त्री भवन
नई दिल्ली - 110 001

आभारोक्ति

आयोग भारत के उच्चतम न्यायालय और इस रिपोर्ट हेतु "**इम्तियाज अहमद** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य** (2012 की दांडिक अपील सं. 254 - 262)" वाले मामले पर रिपोर्ट को अंतिम रूप देने के लिए गठित समूह से प्राप्त मूल्यवान विचारों की भूरि-भूरि प्रशंसा करता है । आरंभतः समूह में प्रो. थेवोडोर आइजेनवर्ग, हेनरी एलेन मार्क प्रोफेसर आफ ला कोर्नेल विश्वविद्यालय में सांख्यिकी विज्ञान सहायक प्रोफेसर ; प्रो. शीतल कालान्त्री, विधि नैदानिक प्रोफेसर, अंतरा-ट्रीय मानव अधिकार रोग वि-नय, शिकागो विधि स्कूल विश्वविद्यालय ; प्रो. श्री कृ-ण देव राव, कुल सचिव, रा-ट्रीय विधि विश्वविद्यालय, दिल्ली (एन.एल.यू. दिल्ली के प्रतिनिधि के रूप में) ; और श्री निकोलस राबिन्स, नीति अनुसंधान केंद्र के फेलो सम्मिलित थे और बाद में भारत के विधि आयोग के परामर्शी डा. अर्पणा चन्द्र और श्री उत्क-र्ा सक्सेना को सम्मिलित कर इसका विस्तार किया गया । श्री माधव मलाया और सुश्री वृन्दा भंडारी, अनुसंधान सहायक, नेशनल विधि विश्वविद्यालय और श्री सरल मनोचा और सुश्री सोनल सारदा, रा-ट्रीय विधि विश्वविद्यालय की छात्रा ने भी आंकड़ों के विश्ले-ाण और संकलन में सहायता की । डा. अर्पणा चन्द्र के अनुसंधान विचारों के अलावा उनका उत्साह और समर्पण विशे-ा उल्लेखनीय है ।

बकाया और पिछला ढेर : अतिरिक्त न्यायिक मानव शक्ति का सृजन

वि-नय-सूची

अध्याय	शी-र्क	पृ-ठ
I.	**प्रस्तावना**	7
II.	**मुख्य अवधारणा : विचाराधीनता, विलंब, बकाया और पिछला ढेर को परिभाि-त किया जाना**	9
III.	**न्यायाधीश संख्या की संख्या गणना**	15
अ.	**आंकड़े का विहंगावलोकन और इसकी परिसीमाएं**	15
आ.	**आंकड़े का विश्ले-ण**	16
इ.	**पर्याप्त न्यायाधीश संख्या की संगणना की पद्धति**	24
	1. न्यायाधीश-जनसंख्या अनुपात और न्यायाधीश-फाइलिंग अनुपात	24
	2. आदर्श मामला भार पद्धति	25
	3. समय आधारित पद्धति	27
	4. निपटान दर पद्धति	29
IV.	**नि-क-र्ा और सिफारिशें**	58
	उपाबंध - I	63
	उपाबंध - II	67
	उपाबंध - III	72
	उपाबंध - IV	78
	उपाबंध - V	84

अध्याय I
प्रस्तावना

''समय से न्याय'' का इनकार स्वयं 'न्याय' के इनकार के समान है । दोनों एक दूसरे के अभिन्न हैं । मामलों का समय से निपटान विधि के नियम को बनाए रखने और न्याय की पहुंच उपलब्ध कराने के लिए आवश्यक है जो एक गारंटीकृत मूल अधिकार है । तथापि, जैसा कि इस रिपोर्ट से उपदर्शित है कि मामलों के भारी पिछले ढेर के कारण न्यायिक प्रणाली समय से न्याय प्रदान करने में असमर्थ है जिसके लिए वर्तमान न्यायाधीश की संख्या पूर्णतः अपर्याप्त है । इसके अतिरिक्त, पहले से ही पिछले ढेर वाले मामलों के अलावा, प्रणाली संस्थित किए गए नए मामलों को निपटाने में समर्थ नहीं हो रही है और मामलों की समतुल्य संख्या के निपटान में समर्थ नहीं है । अतः, पहले से ही पिछले ढेर की कठोर समस्या अब और तीव्र होती जा रही है जिसके परिणामस्वरूप समय से न्याय पाने की संवैधानिक गारंटी और विधि के नियम का अवक्षयण हो रहा है । यह रिपोर्ट इस परिदृश्य को ध्यान में रखकर तैयार की गई है जो अधिक संवेदनशील और तार्किक न्यायिक मानवशक्ति आयोजना सहित बहु-भुज दृ-टिकोण की अपेक्षा करती है ।

यह स्वीकार्य है कि यह रिपोर्ट व्यापकतः माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा प्रेरित है जब **इम्तियाज अहमद**[1] वाले मामले में, न्यायालय ने आयोग को निम्नलिखित के संबंध में अनुसंधान करने और अपनी सिफारिशें प्रस्तुत करने का निदेश दिया :

> ''I. यह ध्यान में रखते हुए कि समयबद्ध न्याय सभी को न्याय दिलाने का एक महत्वपूर्ण घटक है, अतिरिक्त न्यायालयों के सृजन और अन्य सहबद्ध वि-नय (जिसके अंतर्गत 'बकाया' और विलंब की तार्किक और वैज्ञानिक परिभा-ा, जिस पर सतत् ध्यान दिए जाने की आवश्यकता है, सम्मिलित है), विलंब को दूर करने में सहायता, बकाया मामलों की शीघ्र निकासी और लागत में कमी के माध्यम से तत्काल उपाय किए जाने की आवश्यकता है । बारंबार यह कहा जाता रहा है कि न्याय के गुणात्मक तत्व को कम न किया जाए या इसके साथ समझौता न किया जाए ; और
>
> II. प्रत्येक राज्य की बावत उच्च न्यायालयों और अन्य पणधारियों, जिसके अंतर्गत अधिवक्तागण है, को सम्मिलित कर परामर्शी प्रक्रिया के उत्पाद के रूप में जब-जब पूर्वोक्त पहलुओं पर आवश्यक समझा जाए विनिर्दि-ट सिफारिशें की जाएं ।''

प्रस्तुत समस्या की बोधगम्य व्याख्या करने और इसके बारे में किसी प्रकार का सार्थक सुझाव देने के लिए, आयोग ने सभी उच्च न्यायालयों से अपनी अधिकारिता के भीतर प्रत्येक जिले के मुकदमों का आंकड़ा उपलब्ध कराने का अनुरोध किया । सुव्यवस्थित संगठन और आंकड़ों की आपूर्ति को सुकर बनाने के लिए उच्च न्यायालयों को एक विहित प्रपत्र (उपाबंध - I) भेजा गया । तथापि, अधिकांश उच्च न्यायालय विभिन्न कारणों से आंकड़े/ मांगी गई जानकारी पूर्णतः उपलब्ध नहीं करा सके ।

---

[1] देखें, इम्तियाज अहमद ब. उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य, ए.आई.आर. एस. सी. 2012, 624.

प्राप्त आंकड़ों की अपर्याप्तता को ध्यान में रखते हुए, विस्तृत आंतरिक विचार-विमर्श और विशे-ज्ञों को भी सम्मिलित करने के पश्चात्, विभिन्न उच्च न्यायालयों को अतिरिक्त प्रश्नावली भेजी गई । निस्संदेह, उत्तर में कुछ सुसंगत आंकड़े प्राप्त हुए । फिर भी, वैज्ञानिक संग्रहण, मिलान और विश्ले-ाण की कमी अब भी गंभीर अड़चन बनी रही । इन अड़चनों के बावजूद बहुत गहनता से प्राप्त आंकड़ों का पठन और विश्ले-ाण, विशे-ाकर उपलब्ध आकड़ा विश्ले-ाण के विभिन्न तरीकों के आलोक में आयोग ने माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा उठाए गए प्रश्नों और वि-ाय पर अपना उत्तर दिया और वह ही इस रिपोर्ट का भी आधार है ।

जहां यह स्वीकार करते हुए कि विलंब की समस्या न केवल व्यापक बल्कि जटिल है, आयोग इस रिपोर्ट में अधिक बोधगम्य समझ विकसित करने तक ही सीमित रहा कि क्या विलंब की समस्या और न्यायाधीशों की संख्या कुछ हद तक एक दूसरे से संबंधित है और यदि हाँ तो कैसे ? रिपोर्ट में, उतने न्यायाधीशों की संख्या का सुझाव देने का प्रयास किया गया है जितने विलंब को कम करने के लिए अपेक्षित हैं । एक तरह से यह रिपोर्ट न्यायिक मानवशक्ति आयोजना की रूपरेखा उपलब्ध कराती है । यह सहमत होते हुए कि कोई स्प-ट 'समय-सीमा' या 'निर्देश' विद्यमान नहीं है जिसके आधार पर किसी मामले को 'विलंबित' वर्गीकृत किया जा सके । कैसे 'समयबद्धता' परिभा-ित की जाए (और इस प्रकार, कितने मामले विलंबित हैं), संगणना के लिए किस प्रकार के आधार का सुझाव देना निर्णायक है कि समयबद्ध रीति से मामलों की प्रक्रिया के लिए कितने न्यायाधीशों की अपेक्षा है । ऐसी कोई परिभा-ा निकाले बिना विलंब की समस्या से निपटने के लिए अपेक्षित आयोजना की कोई समुचित रीति और अतिरिक्त संसाधनों की संगणना का सुझाव देना कठिन है । इसी प्रकार, आयोग पूर्णतः अवगत है और इस प्रकार 'बकाया', 'विचाराधीनता', और 'पिछला ढेर' जैसे पदों को रिपोर्ट में रूपायित किया गया है जिनका उपयोग प्रायः भारत में न्याय प्रशासन प्रणाली के कार्यकरण के लगभग सभी तरह के प्रक्रम पर किया जाता है और इनका प्रयोग बहुत अनिश्चित रूप से किया जाता है तथा स्प-ट और निश्चित (संक्षिप्त)परिभा-ा की मांग है । रिपोर्ट में इन कुछ पक्षों पर अधिक प्रकाश डालने और प्रतिबिंबित करने का प्रयास किया गया है और यह आशा की जाती है कि नीति निर्माता और प्रणाली के अन्य पणधारी इन प्रकाश बिंदुओं पर ध्यान देंगे और न्यायिक सुधार पर अपनी चर्चा के दौरान इस कार्य का उपयोग कर कुछ स्प-टता लाने का प्रयास करेंगे ।

रिपोर्ट का महत्वपूर्ण मुद्दा यह संगणित करने हेतु कुछ आधार का सुझाव देना है कि काफी हद तक 'समयबद्ध' रीति से मामलों को प्रक्रियागत करने के लिए कितने अतिरिक्त न्यायाधीशों की अपेक्षा है, इस प्रश्न का उत्तर इस बात पर निर्भर करता है कि कैसे कोई समयबद्धता को परिभा-ित करता है (और इस प्रकार, कितने मामले विलंबित हैं) । पहले ही पूर्वगामी पैराग्राफों के उल्लेखानुसार ठोस पुनरावृत्ति की कीमत पर यह बल दिया जा सकता है कि कोई ऐसी परिभा-ा निकाले बिना विलंब को दूर करने के लिए अपेक्षित आयोजना हेतु किसी समुचित रीति और अतिरिक्त संसाधनों की संगणना करने का सुझाव देना कठिन है । आरंभ में ही रिपोर्ट का महत्वपूर्ण भाग वि-ाय के साहित्य की परिगामी अभिव्यक्ति, 'बकाया', 'विचाराधीनता' और 'विलंब' जैसे पदों को परिभा-ित करने हेतु विभिन्न सोच की आलोचनात्मक परीक्षा के पश्चात् आयोग का अपना चिंतन जोड़ा गया है । ये चिन्तन जहां ऐसे उपरोक्त निर्दि-ट पदों का कुछ अधिक स्प-ट अर्थ उपलब्ध कराते हैं जिन्हें प्रायः संदिग्ध समझा जाता रहा है किंतु अब भी आयोग का यह मत है कि इन अवधारणाओं की कोई पूर्ण वैज्ञानिक और एकरूप परिभा-ा विकसित करना संभव नहीं हो सकता है । ऐसी परिभा-ागत सीमा और प्राप्त आंकड़ों की अपर्याप्तता को स्वीकार करते हुए, यह रिपोर्ट वर्तमान

विचाराधीनता के निपटान और भवि-य में पिछला ढेर होने से रोकने के लिए अपेक्षित अतिरिक्त संसाधनों पर कुछ सुझाव देने का अंतिम प्रयास करती है ।

अध्याय II

मुख्य अवधारणा : विचाराधीनता, विलंब, बकाया और पिछला ढेर को परिभाि-त किया जाना

ऐसी कोई एक या स्प-ट समझ नहीं है कि कब मामले को विलंबित माना जाए । प्रायः 'विलंब', 'विचाराधीनता', 'बकाया' और 'पिछला ढेर' जैसे पद का प्रयोग पारस्परिकतः किया जाता है । यह भ्रम पैदा करता है । इस भ्रम को दूर करने और सुस्प-टता के लिए इन पदों को निम्नलिखित रूप में समझा जा सकता है :

क. **विचाराधीनता** : इस बात पर ध्यान दिए बिना कि मामला कब संस्थित किया गया था, सभी संस्थित किंतु निपटाए न गए सभी मामले ।

ख. **विलंब** : ऐसा मामला जो उस सामान्य समय से अधिक समय तक न्यायालय/न्यायिक व्यवस्था में रहा है जैसा उस तरह के मामले के निपटान में लगना चाहिए ।

ग. **बकाया** : कुछ विलंबित मामले विधिमान्य कारणों से व्यवस्था में सामान्य समय से अधिक समय तक हो सकते हैं । ऐसे मामले जिनमें अनापेक्षित विलंब होता है, को बकाया के रूप में निर्दि-ट किया जाएगा ।

घ. **पिछला ढेर** : जब किसी समयावधि में नए मामलों का संस्थापन उस समयावधि में मामलों के निपटान से अधिक होता है तो संस्थापन और निपटान के बीच का अंतर पिछला ढेर है । यह आंकड़ा जितने मामले फाइल किए जा रहे हैं उन्हें निपटाने की प्रणाली की असमर्थता के कारण प्रणाली में मामलों का संचयन प्रतिबिम्बित करता है ।

अतः, जैसाकि स्प-ट है, विलंब और बकाया जैसे परिभा-ेय पद 'सामान्य' मामला प्रक्रियात्मक समय मानक की संगणना की अपेक्षा करते हैं । सामान्य समय अवसंरचना का अवधारण कैसे किया जाए ? यह उल्लेखनीय है कि चूंकि उच्चतम न्यायालय ने विधि आयोग को 'बकाया' और 'विलंब' की 'तार्किक और वैज्ञानिक परिभा-ा' की सिफारिश करने का निदेश दिया था इसलिए आयोग ने आरंभ में ही माननीय उच्चतम न्यायालय को स्प-ट किया था कि ऐसा कोई एकल 'वस्तुनि-ठ' मानक या अंकगणितीय फार्मूला नहीं है जिसके प्रतिनिर्देश से 'सामान्य' मामले की प्रक्रिया का समय नियत होता हो और इस प्रकार विलंब को परिभाि-त या संगणित किया जा सके । तथापि, आयोग का यह मत है कि सांख्यिकी, सामाजिक विज्ञान अनुसंधान तकनीक और अनुभवाश्रित नि-क-र्षों के आधार निकाले गए विभिन्न तरीकों से 'सामान्य' मामले के निपटान समय का 'तार्किक' अवधारण करने में सहायता मिल सकती है और विलंब का निर्धारण किया जा सकता है । भारत में विभिन्न अधिकारिताओं और पूर्व सुधार प्रयासों के सर्वे के आधार पर यह प्रकट हुआ है कि तार्किक समयबद्ध अपेक्षाओं की संगणना में प्रायः दो दृ-टिकोण और उनके संयोजन का उपयोग किया जाता है ।

प्रथम दृ-टिकोण, जिसे **प्रक्रिया निर्धारण दृ-टिकोण** कहा जाता है, में मामला फाइल करने का वर्तमान तरीका, निपटान, मामला-समय और विचाराधीनता का अध्ययन अंतवर्लित है । अधिकारिताओं के बीच और परस्पर इन तरीकों का तुलनात्मक विश्ले-ाण नीति निर्माताओं को यह अवधारित करने में सहायता पहुंचा सकता है कि क्या विशि-ट न्यायालय औसतन प्रणालीवार या प्रणाली के मध्यमान मामले की तुलना में अधिक या कम समय लेता है । यह विश्ले-ाण नीति निर्धारकों को यह नहीं बताता कि विशि-ट न्यायालय या तरह के मामले में विलंब होता है । तथापि, यह सापेक्ष निर्धारण की अनुज्ञा देता है जिसमें न्यायालय अन्य की तुलना में अधिक समय लेते हैं ऐसा कि वे संसाधन, आदि के अधिक आबंटन के निबंधनों में लक्षित हस्तक्षेप की अपेक्षा कर सकें ।[2]

जब कोई न्यायालय अपने मामले के प्रक्रियागत समय में पूर्णतः बाहरी व्यक्ति होता है, तो नीति निर्माता (या वरि-ठ न्यायालय) यह नि-क-र्ा निकाल सकते हैं कि उस न्यायालय के मामले अस्वीकार्यतः विलंबित हैं, अतः मामले बकाए रह जाते हैं ।[3] इसके अतिरिक्त, जहां वर्तमान प्रक्रिया निर्धारण विलंब परिभाि-त करने में अपर्याप्त हैं वहां वे यह प्रकट कर सकते हैं कि कब और कहां (किस न्यायालय और किस तरह के मामलों में) पिछला ढेर सृजित हो रहा है जिससे कि लक्षित हस्तक्षेप मुद्दे से निपटने के लिए संभव हो । अन्य उपायों के अभाव में यह ऐसा दृ-टिकोण है जिसे आयोग ने अधीनस्थ न्यायपालिका के लिए पर्याप्त न्यायिक संख्या के प्रश्न की परीक्षा करने हेतु अपनाया है।

दूसरा दृ-टिकोण, जिसे **प्रासमिक निर्धारण दृ-टिकोण** कहा जाता है, मामलों के निपटान के लिए समय मानक नियत करने के लिए है । ऐसे मामले जिनका निपटान ऐसी समय सीमा के भीतर किया जाता है, को विलंबित नहीं कहा जाता : ऐसी सीमा से परे मामले विलंबित हैं : ऐसे मामले जिनमें अनापेक्षित विलंब होता है, बकाए मामले हैं । एक ऐसा साधन जिसके द्वारा कठोर और तार्किक रीति में ऐसे मानकों का व्यवस्थापन हो सकता है, फाइल करने, निपटान, विचाराधीनता, विलंब आदि के वर्तमान पैटर्न के अध्ययन द्वारा आरंभ होता है । इस अध्ययन के आधार पर नीति निर्माता विभिन्न प्रकार के मामलों की प्रक्रिया में लगने वाले औसत या मध्य समय का अवधारण कर सकते हैं। पर्णधारकों से साक्षात्कारों पर आधारित अध्ययनों नमूना मामलों के कालचक्र की परीक्षा

---

[2] उदाहरणार्थ, देखें, न्यायमूर्ति एम. जे. राव समिति रिपोर्ट भारत में न्यायिक प्रभाव निर्धारण, जिल्द 2, पृ-ठ 46 (2008) (दिल्ली और आस्ट्रेलिया के निपटान दर की तुलना) । फाइलिंग और निपटान के वर्तमान पैटर्न पर आधारित तुलनात्मक दृ-टिकोण का समर्थन करते हुए समिति की रिपोर्ट में उपाबंध-I के रूप में सहबद्ध दृ-टिकोण पत्र में यह सुझाया गया है कि ''पूर्व दो-दो व-र्ों के आंकड़ों के आधार पर प्रत्येक प्रकार के मामले के लिए (प्रति न्यायाधीश) निपटान दर का आंकड़ा होना चाहिए । यह मानीटर किया जाना चाहिए कि प्रत्येक न्यायाधीश अपने प्रकार के मामले के भीतर इस माध्यिक मूल्य के 10% के समूह के भीतर है । यदि अन्यथा पाया जाए, तो कम निपटान दर के कारणों की जांच की जानी चाहिए और यदि कारण असमाधानप्रद पाए जाएं तो उपचारात्मक उपाय गठित किए जाने की आवश्यकता है । फिर भी, यदि किसी विशि-ट न्यायाधीश की निकासी सूची लगातार तीन महीनों तक 90 से नीचे होती है या पूर्ण तिमाही की तुलना में कुल 90 से कम है, तो निपटान दर की जांच की जानी चाहिए और क्या यह 10% के समूह को पु-ट करता है, सत्यपान किया जाना चाहिए ।'' पृ-ठ 52-53 तदैव, देखें ।

[3] इस सापेक्ष तुलनात्मक दृ-टिकोण का अनुसरण कनेडियन उच्चतम न्यायालय द्वारा यह अवधारण करने के लिए किया गया कि आनटैरियों दंड न्यायालय ने ऐसा अवांछित विलंब किया कि दंड प्रतिवादियों के शीघ्र विचारण के लिए अधिकार का अतिक्रमण हुआ । देखें **आर.** बनाम **अस्कोव** (1990) 2 एस. सी. आर. 1199 (कनाडा) सप्ली. सी.टी.

आदि की संकल्पना यह समझने के लिए की जा सकती है कि क्या यह समय-सीमा समयबद्ध निपटान के लिए अधिकतम मानक हो सकते हैं । प्रणाली के व्यापक अनुभव की जानकारी रखने वाले व्यक्तियों से लिए गए विशे-ज्ञ समिति तब संसाधन अवरोधों, न्यायालय संस्कृति, प्रणाली के लक्ष्य और संवैधानिक तथा कानूनी अपेक्षाओं को ध्यान में रखते हुए, वर्तमान पैटर्न के अधिकतम लक्ष्य का अवधारण कर सकती है ।[4]

अतः, प्रासमिक दृ-टिकोण पिछले और वर्तमान आंकड़ों के सम्मिश्रण, समाज विज्ञान अनुसंधान तकनीक और 'सामान्य' मामला निपटान समय और विलंब का 'तार्किक' अवधारण करने हेतु अनुभवाश्रित बातों का अवलंब लेता है ।

प्रासमिक निर्धारण दृ-टिकोण के माध्यम से विलंब को परिभा-ित करने का एक तरीका ऐसे सामान्य समय-सीमा के अवधारण द्वारा है जिसके भीतर एक विशि-ट प्रकार के मामलों की कार्यवाही न्यायालय के माध्यम से हो जानी चाहिए । यदि किसी मामले में उस समय सीमा से अधिक समय लगता है तो मामला विलंबित माना जाएगा । समय-सीमा आज्ञापक समय सीमा प्रकृति की हो सकती है या उसमें ऐसे सामान्य मार्ग-दर्शक सिद्धांत हो सकते हैं जिनका अनुपालन सामान्यतः किया जाए, किंतु आपवादिक परिस्थितियों में इसका विपथन हो सकता है ।

यू.एस. जैसे देशों के पास, उदाहरणार्थ, यू. स. शीघ्र विचारण अधिनियम, 1974 के अधीन सीमित आज्ञापक समय ढांचा है ।[5] तथापि, भारत के पास यू. एस. शीघ्र विचारण अधिनियम के तुलनीय सामान्य कानूनी समय-सीमा नहीं है । जहां सिविल प्रक्रिया संहिता और दंड प्रक्रिया संहिता में मामले के कतिपय प्रक्रमों को पूरा करने की समय-सीमा है वहीं इन कानूनों में ऐसी विहित समय-सीमा नहीं है जिनके भीतर समग्र मामले को पूरा किया जाए या विचारण के प्रत्येक चरण को समाप्त किया जाए ।[6]

---

[4] प्रायः इस दृ-टिकोण का अनुसरण अन्य अधिकारिताओं में किया जाता है । देखें उदाहरणार्थ, नेशनल सेंटर फार स्टेट कोर्ट, मोडल टाइम स्टैंडर्ड फार स्टेट ट्रायल कोर्ट (यू.एस.ए. 2011) ; ट्रायल विपिन रीजनेबुल टाइम :

कनाडा विधि सुधार आयोग के लिए तैयार किया गया वर्किंग पेपर (न्याय विभाग कनाडा, 1994)

[5] यू. एस. शीघ्र विचारण अधिनियम, 1974 ऐसी समय-सीमा का उपबंध करता है जिसका पालन कतिपय अपवादों (उदाहरणार्थ, 18 यू.एस.सी.ई. 3161(एच.)(7)(ए) एंव (बी) और अपवर्जनों (उदाहरणार्थ 18 यू. एस. सी. ई. 3161 (एच)(1)-(8) के अधीन रहते हुए किया जाना चाहिए । किसी विपथन का परिणाम विहित शास्ति और परिणाम के अधिरोपण के रूप में होगा । देखें, उदाहरणार्थ, यू. एस. सी. 3162 । उदाहरणार्थ, अभ्यारोपण (भारतीय दंड प्रक्रिया संहिता के अधीन आरोपों की विरचना के तत्समान) गिरफ्तारी या समन की तामील के 30 दिनों (कतिपय मामलों में 60 दिनों तक विस्तार्य) के भीतर होना चाहिए । 18 यू. एस. सी. ई. 3161 (बी) विचारण (क) अभ्यारोपण या (ख) न्यायालय के समक्ष प्रतिवादी की आरंभिक उपस्थिति की तारीख, जो बाद में हो, के पश्चात् 70 दिनों के भीतर आरंभ होना चाहिए । 18 यू. एस. सी. ई. 3161 (सी) । निरोध पूर्व विचारण के प्रतिवादी का विचारण भी गिरफ्तारी के नब्बे दिनों के भीतर आरंभ की जाए । 18 यू. एस. सी. ई. 3164 (बी) ।

[6] दृ-टांतों के उदाहरण जहां समय-सीमा विहित हैं, में सिविल प्रक्रिया संहिता का आदेश 8 नियम 1 सम्मिलित है जो लिखित कथन फाइल करने के लिए समन की तामीली से 90 दिनों की अधिकतम समय-सीमा विहित करता है । इसी प्रकार दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 यह उपबंध करता है कि अभियुक्त की गिरफ्तारी के 60 या 90 दिनों के भीतर (मामले के प्रकार के आधार पर) आरोप-पत्र फाइल की जानी चाहिए । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 309

न्यायिक पक्ष की ओर से, उच्चतम न्यायालय द्वारा कई मामलों में आज्ञापक समय-सीमा स्थिर करने का प्रयास किया गया ।[7] तथापि, वर्ष 2002 में न्यायालय की सात न्यायाधीशों की न्यायपीठ ने **पी. राम चन्द्र राव** बनाम **कर्नाटक राज्य**[8] वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया कि न्यायालय द्वारा आज्ञापक समय-सीमा विहित नहीं की जा सकती ।[9] यद्यपि न्यायालय आज्ञापक समय-सीमा के पक्ष में नहीं था फिर भी, उसने न्यायालय के मार्गदर्शक सिद्धांतों के रूप में समय-सीमा के उपयोग को समस्याप्रद नहीं पाया । ऐसे अबाध्यकारी निदेशात्मक मार्गदर्शक सिद्धांतों का चिरभोग भारत और विदेश दोनों जगह सामान्य समय-सीमाओं को परिभाषित और विलंब का मूल्यांकन करने के सामान्य साधन रहे हैं ।[10] भारत में, पूर्व विधि आयोगों और विभिन्न सरकारी समितियों ने मामलों के समयबद्ध निपटान हेतु न्यायालयों के मार्गदर्शक सिद्धांतों के रूप में और ऐसे मानक हेतु जिसके द्वारा प्रणाली में विलंब को मापा जा सकता है, दोनों के लिए विभिन्न निदेशात्मक समय-सीमा का सुझाव दिया है ।[11] तथापि, ये सभी सुझाव अनुभवाश्रित विश्लेषण और मताभिव्यक्तियों पर आधारित होने के

एक सामान्य मार्गदर्शक सिद्धांत का उपबंध करता है कि सुनवाई यथासंभव यथाशीघ्र की जाए और एक बार साक्षियों की परीक्षा आरंभ होने पर सुनवाई दैनंदिन आधार पर की जाए । तथापि, धारा 376 से 376घ के अधीन आने वाले मामलों के सिवाय, विचारण के समग्र संचालन के लिए कोई समय-सीमा नियत नहीं की गई है । इन धाराओं के अधीन मामलों को साक्षियों की परीक्षा के आरंभ की तारीख से 2 मास के भीतर यथासंभव पूरा किया जाना चाहिए ।

[7] **कामन काज** बनाम **भारत संघ** (1996) 4 एस.सी.सी. 33, कामन काज (II) (1996) 6 एस. सी. सी. 775 **राजदेव शर्मा** बनाम **बिहार राज्य,** (1998)7 एस. सी. सी. 507 ; राजदेव शर्मा (II)] (1999) 7 एस. सी. सी.604.

[8] (2002) 4 एस. सी. सी. 578.

[9] यथावत् न्यायालय के अनुसार

[10] नेशनल सेन्टर फार स्टेट कोर्ट, मोडेल, टाइम स्टैन्डर्ड फार स्टेट कोट 3(2011) देखें । यू.एस. विचारण न्यायालयों के लिए उन मोडल स्टैन्डर्ड का अनुमोदन अगस्त, 2011 में कांफ्रेंस आफ स्टेट कोर्ट एडमिनिस्ट्रेटर (कोस्का) (यू.एस.), (यू.एस.) कांफ्रेंस आफ चीफ जस्टि ; अमेरिकन बार एशोसिएशन हाउस आफ डेलेगेट (ए.बी.ए.; और (यू.एस.) नेशनल एशोसिएशन फार कोर्ट मैनेजमेंट द्वारा किया गया था ।

[11] काफी पहले 1958 में, भारत के विधि आयोग की 14वीं रिपोर्ट ने यह मान्यता प्रदान की कि विवाद समाधान प्रक्रिया आधारित न्यायालय के विभिन्न प्रक्रमों को पूरा करने हेतु संस्थापन और निपटान के बीच काफी समय लगना आवश्यक है और यह कि ''इस प्रकार लगने वाला समय बाद की प्रकृति, पक्षकारों और साक्षियों की संख्या, अनुरोध अधिकारी की क्षमता और इसी प्रकार जैसे विभिन्न कारकों पर निर्भर करेगा । हमें यह नहीं भूना चाहिए कि दो मामलों के तथ्य समान होने पर भी, प्रत्येक मामले पर उसके समाधानप्रद निपटान के लिए अलग-अलग ध्यान देना अनिवार्य है और मामलों के निपटान में कोई ''सामूहिक उत्पादन तरीका'' या ''सामूहिक एकल तकनीक'' न्याय के ठोस प्रशासन के बिल्कुल असंगत होगा ।'' तथापि, आयोग ने यह भी मान्यता प्रदान किया कि इन कैवियट के होते हुए भी, ''ऐसी समय-सीमा अवधारित करना अब भी संभव होगा जिसके भीतर विभिन्न वर्ग की न्यायिक कार्यवाहियों का उपसंहार मामूली रूप से उसी न्यायालय में होना चाहिए जिसमें वे संस्थित किए गए हैं ।'' इस तर्क के आधार पर, आयोग ने विभिन्न प्रकार के मामलों के लिए समय ढांचे की सूची उपलब्ध करायी । भारत का विधि आयोग, 14वीं रिपोर्ट, न्यायिक प्रशासन का सुधार, जिल्द-। पृ-ठ 130 (1958)

विधि आयोग द्वारा क्रमशः 1979 और 2009 में अपनी 77वीं, 79वीं और 230वीं रिपोर्ट में इस तरीके को दोहराया गया । भारत का विधि आयोग, विचारण न्यायालय में विलंब और बकाया पर 77वीं रिपोर्ट (1979) ; भारत का विधि आयोग, उच्च न्यायालयों और अन्य अपीली न्यायालयों में विलंब और बकाया पर 79वीं रिपोर्ट 9-10(1979) ; भारत का विधि आयोग, न्यायपालिका में सुधार, कुछ सुझाव पर 230वीं रिपोर्ट 1.61(2009)

बजाए तदर्थ चिरभोग पर आधारित हैं । और इस प्रकार **इम्तियाज अहमद** वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा उद्भूत 'बकाया' और 'विलंब' की 'तार्किक और वैज्ञानिक परिभा-ा' की चिंता के निवारणार्थ गहन अध्ययन और आंकड़ों के अनुसार परिशुद्धता की अपेक्षा है ।

समय ढांचा कार्यपालन निर्देश चिह्न के उद्देश्य को पूरा करता है और न्यायालयों और अन्य पणधारियों को ऐसा मार्गदर्शक सिद्धांत उपलब्ध कराता है जिस पर मामले का समयबद्ध निपटान हो और उन्हें यह अवधारित करने हेतु समर्थ बनाता है कि क्या कोई व्यि-टक मामले की कार्यवाही समयबद्ध ढंग से की जा रही है ; और क्या न्यायालय या व्यवस्था समग्रतः समयबद्ध न्याय उपलब्ध करा रही है । जहां समय ढांचा आज्ञापक नहीं है, वहां वे केवल सीमित परिस्थितियों में विपथित हो सकते हैं और इस औचित्य की अपेक्षा के साथ कि समय ढांचा से ऐसा विपथन क्यों आवश्यक है । यह व्यक्तिगत मामले में कार्यवाही की आवश्यकतानुसार नमनीयता का उपबंध करता है जबकि वहीं समयबद्धता की परवाह करना व्यवस्थागत चिंता है ।

यद्यपि इस प्रकार का सामान्य समय-ढांचा उपयोगी निर्देश चिह्न प्रयोजन को पूरा करता है और मिल को चलाने के लिए समय सांचे के रूप में या औसत मामले में बिल्कुल उपयुक्त हैं फिर भी उनमें ऐसे मामले, जिसके लिए कम या अधिक समय की अपेक्षा है, हेतु अतिरिक्त उचित सामंजस्य की अपेक्षा है । मानकीकृत समय-ढांचे का समयबद्ध न्याय की अपेक्षाओं का अवधारण करने में न्यूनाधिक समावेशी होने की संभावना है । कार्यपालन निर्देश चिह्न का आशय सभी मामलों में एक ही समय प्रक्रियागत करना नहीं है । प्रत्येक मामला भिन्न-भिन्न है और मामलों की भिन्न-भिन्न अपेक्षाएं हो सकती हैं । अतः, सामान्य मार्गदर्शक सिद्धांत के अलावा मामला विनिर्दि-ट अवधारण के लिए यह अपेक्षा है कि कौन सी बात मामले के समयबद्ध निपटान के समान होगी । **मामला-विनिर्दि-ट समय सारणी** सामान्यः व्यक्तिगत समयबद्ध न्याय के उद्देश्य को पूरा करने के लिए अपनायी जाती है । ऐसी समय-सारणी किसी विशि-ट विवाद की सुनवाई कर रहे न्यायाधीश द्वारा सामान्यतः कार्यवाही आरंभ करते हुए सुनवाई का समय निर्धारित करके नियत की जाती है, जिससे कि सभी पक्षकारों को यह ज्ञात हो कि उसे क्या कार्य करना है और कब तक । व्यक्तिगत समय-सारणी विन्यास न्यायाधीश को व्यक्तिगत मामले की अपेक्षाओं के अनुरूप सामान्य समय ढांचा गढ़ने की अनुज्ञा देता है जबकि उसी समय न्यायाधीश के समक्ष सारे मामले के सार को ध्यान में रखने की आवश्यकता होती है । मामला कार्यवाही के आरंभ में निर्धारित समय-सारणी तब निर्देश चिह्न होती है जिसके द्वारा कार्यवाहियों की समयबद्धता मापा जाता है । अप्रत्याशित घटनाएं समय-सारणी को अस्थिर कर सकती है किंतु विलंबित होने पर भी मामले को बकाया के रूप में नहीं गिना जाएगा यदि विलंब प्रत्याशित था ।

मामला विनिर्दि-ट समय-सारणी का उपयोग समयबद्धता मानक, विलंब कमी ढंग और यू.एस.[12], यू.के.[13] और कनाडा[14] सहित विश्व के विभिन्न अधिकारिताओं में प्रणाली में विलंब के

हाल ही में मलिमथ समिति ने ऐसे मानक के रूप में 2 व-र् के समय ढांचे के उपयोग की सिफारिश की जिस तक प्रणाली में विलंब और बकायों को मापा जाना चाहिए । विधि मंत्रालय, भारत सरकार, आपराधिक न्याय प्रणाली सुधार की समिति (मलिमथ समिति, पृ-ठ 164 ; 13.3 (2003)

[12] फेडरल सिविल प्रक्रिया नियम, नियम 16 ; अमेरिकन बार एसोसिएशन, स्टैन्डर्ड रिलेटिंग टु ट्रायल कोर्ट (1992), 2.51 ('मामला प्रबंधन').

लिए मानदंड के रूप में किया जाता है । भारत में उच्चतम न्यायालय ने भी हाल ही में **रामरामेश्वरी देवी** बनाम **निर्मला देवी**[15] वाले मामले में मामलों के समयबद्ध निपटान के लिए मामला विनिर्दि-ट समय-सारणी के उपयोग की वकालत की ।

व्यवस्थित मामला प्रबंधन रणनीति के मुख्य भाग के रूप में, ऐसी समय-सारणियां विवाद समाधान के लिए स्प-ट समय-सीमा का उपबंध करती हैं, वादकारियों की समयबद्धता की प्रत्याशाओं को परिभाि-त करती हैं और इस प्रकार वादकारियों के विलंब के अनुभव पर प्रभाव डालती हैं । वे न्यायाधीश को उस मामले हेतु समय-सारणी विरचित करने में व्यक्तिगत मामले के विनिर्दि-ट पहलुओं पर ध्यान देते हुए लचीलापन अपनाने की अनुज्ञा देती हैं । जब सामान्य समय-सीमा मार्गदर्शक सिद्धांत होगा तो लंबी अवधि समय-सीमा स्थापित कर शक्ति के दुरुपयोग की संभावना से बचा जा सकता है ।

जब मामला विनिर्दि-ट लक्ष्य को प्रणालीगत विलंब के कारण पूरा न किया जा सकता हो तो प्रणाली को उचित संसाधनों के आबंटन का दायित्व उठाने की आवश्यकता है । जहां विलंब पक्षकारों के आचरण के कारण हो वहां न्यायाधीश आवेदन खारिज करने, खर्चा अधिरोपित करने, आदि सहित ऐसे बर्ताव के लिए अनुशास्ति का उपबंध कर सकता है ।

प्रासमिक निर्धारण दृ-टिकोण इ-टतम समय-सीमा अवधारित करने के लिए राज्य स्तर अध्ययनों की अपेक्षा करता है । उच्च न्यायालय पर्याप्त समय मानक अवधारित करने में राज्य स्तर चिंताओं और परिस्थितियों पर बेहतर ढंग से विचार कर सकते हैं । इन समय मानकों के अवसंरचनात्मक ढांचे के भीतर व्यक्तिगत अधीनस्थ न्यायालय के न्यायाधीश व्यक्तिगत मामलों के लिए समय-सीमा स्थिर कर सकते हैं । इस प्रणाली को क्रियाशील बनाने के लिए ठोस मानीटरिंग अवसंरचनात्मक ढांचे की अपेक्षा होगी, जिसके द्वारा उच्च न्यायालयों द्वारा व्यक्तिगत न्यायाधीशों के मामला भार की समयबद्धता का पर्यवेक्षण किया जा सकेगा । सार्वजनिक संवीक्षा से भी निपटान और समयबद्धता आंकड़ों की वार्ि-क रिपोर्टिंग सुनिश्चित होगी और समयबद्धता लक्ष्यों और मानकों के प्रति उत्तरदायित्व की दूसरी कड़ी जुड़ जाएगी ।

तथापि, आरंभ में प्रासमिक निर्धारण दृ-टिकोण विलंब और बकाया की तार्किक और वैज्ञानिक परिभा-ा प्रदान करने के लिए काफी समय तक व्यापक और गहन अध्ययन की अपेक्षा करता है । इसी बीच, ऐसे समय ढांचे के अभाव में और भारत की अधीनस्थ न्यायपालिका में पर्याप्त न्यायिक

---

[13] यू. के. क्रिमिनल प्रक्रिया नियम, 2012 का भाग 3 मामला विनिर्दि-ट प्रबंधन और पक्षकारों द्वारा गैर-आबद्धकारी परामर्श में न्यायाधीश द्वारा समय नियतन की अपेक्षा करता है । सिविल न्याय सुधार पर वूल्फ कमेटी रिपोर्ट (मामला कार्यवाही) के आरंभ में मामला विनिर्दि-ट समय-सारणी स्थिर करने और पालन करने हेतु न्यायाधीशों से अपेक्षा पर, भी देखें ।

[14] सिविल प्रक्रिया नियम (ओंटरियो), नियम 77 देखें । भारत का विधि आयोग, मामला प्रबंधन का परामर्श पत्र, http://lawcommissionofindia.nic.in/adr_conf/ casemgmt%20draft% 20rules.pdf

[15] (2011) 8 एस. सी. सी. 249 ; न्यायालय के अनुसार,

> वादपत्र फाइल करने के समय, विचारण न्यायालय को पूरी समय सूची तैयार करनी चाहिए और वाद के सभी प्रक्रमों के लिए लिखित कथन फाइल करने से लेकर निर्णय सुनाने तक तारीखें नियत करनी चाहिए और न्यायालयों को कड़ाई से उक्त तारीखों और यथासंभव उक्त समय-सारणी का पालन करना चाहिए । यदि कोई अंतवर्ती आवेदन फाइल की जाती है तो उसका निपटान स्वयं उक्त वाद में नियत सुनवाई की उक्त तारीखों के बीच में किया जा सकता है जिससे कि मुख्य वाद के लिए नियत तारीखें अस्त-व्यस्त न हो सकें ।

संख्या के अध्ययन के प्रयोजनों के लिए आयोग ने इस प्रश्न का समाधान करने के लिए कि वर्तमान विचाराधीनता की निकासी के लिए और भवि-य में पिछले ढेर के संचयन को रोकने के लिए क्या अधिक न्यायिक संसाधनों की अपेक्षा है (और उन्हें कहां लगाया जाना चाहिए), संस्थापन, निपटान और विचाराधीनता के वर्तमान पैटर्न की परीक्षा की ।

अध्याय III

न्यायाधीश संख्या की संगणना

अ. आंकड़ो का विहंगावलोकन और इसकी परिसीमाएं

आलोचनात्मक विश्ले-ण करने और अधिक सार्थक सुझाव देने में संपूर्ण आंकड़ों की कमी एक भारी अड़चन थी क्योंकि कई उच्च न्यायालयों[16] से प्राप्त प्रश्नावली के उत्तर अपूर्ण थे । तथापि, आंध्र प्रदेश, बिहार, दिल्ली, गुजरात, हिमाचल प्रदेश, जम्मू और कश्मीर, झारखंड, कर्नाटक, केरल, पंजाब और हरियाणा, सिक्किम और उत्तराखंड द्वारा दिए गए आंकड़े प्रस्तुत कार्य के लिए आधार बनाने में काफी उपयोगी साबित हुए । इस रिपोर्ट का विश्ले-ण इन उच्च न्यायालयों से प्राप्त आंकड़ों पर आधारित है ।

उच्च न्यायालयों ने 2002 से 2012 तक की अवधि के आंकड़े उपलब्ध कराए हैं । प्राप्त सभी आंकड़ों की गणना वार्-िक आधार पर की गई है । अतः, उदाहरणार्थ प्रत्येक उच्च न्यायालय ने संस्थापन, निपटान, विचाराधीनता आदि के प्रवर्गों के अधीन प्रत्येक व-र्ा के 31 दिसंबर का आंकड़ा उपलब्ध कराया है ।

कुछ उच्च न्यायालयों ने ऐसे आंकड़े उपलब्ध कराएं हैं जिन्हें दो प्रवर्गों में अर्थात् उच्च न्यायिक सेवा और अधीनस्थ न्यायिक सेवा में असंकलित किया गया है । अन्य उच्च न्यायालयों ने काडर अर्थात् उच्च न्यायिक सेवा, सिविल न्यायाधीश (सीनियर) डिवीजन और सिविल न्यायाधीश (जूनियर) डिवीजन द्वारा असंकलित आंकड़े उपलब्ध कराए हैं । विश्ले-ण की एकरूपता के लिए सभी आंकड़ों को उच्चतर न्यायिक सेवा और अधीनस्थ न्यायिक सेवा के दो व्यापक प्रवर्गों में विश्लेि-त किया गया है ।

यह उल्लेख करना महत्वपूर्ण है कि संस्थापन, निपटान और विचाराधीनता के आंकड़े प्रणाली में मामलों की वास्तविक संख्या को उपदर्शित नहीं करते । उच्च न्यायालय विभिन्न तरह से आंकड़ों की गणना करते हैं । हिमाचल प्रदेश, जम्मू और कश्मीर, उड़ीसा और सिक्किम जैसे कुछ उच्च न्यायालय अधीनस्थ न्यायालयों के समक्ष अंतवर्ती आवेदनों की गणना पृथक् संस्थापन, निपटान और विचाराधीनता के रूप करते हैं । केरल भी सुपुर्दगी कार्यवाहियों की गणना संस्थापन, निपटान और विचाराधीनता के प्रयोजनों के लिए पृथक् रूप में करता है । अतः, एक ही मामले की गणना कुछ उच्च न्यायालयों में कई बार की जा सकती है । इस प्रकार, न्यायालयों में लंबित, संस्थित और निपटाए गए मामलों की संख्या सुझाए गए समग्र विचाराधीनता, संस्थापन या निपटान आंकड़ों से **सार्थकतः कम** है ।

---

[16] उपाबंध । और ।। देखें ।

आगे, आंकड़ों को सारणीबद्ध करने में प्रक्रियात्मक बहुलता विभिन्न उच्च न्यायालयों के बीच परस्पर तुलना करते समय समस्या पैदा करती है । उदाहरणार्थ, दिल्ली, आंध्र प्रदेश, बम्बई, कर्नाटक और मध्य प्रदेश उच्च न्यायालयों में अंतवर्ती आवेदनों की गणना पृथकतः नहीं की गई है । पंजाब और हरियाणा, झारखंड और पश्चिमी बंगाल उच्च न्यायालयों में गणना करने या गणना न करने की पद्धति जिला प्रति जिला भिन्न-भिन्न हैं । इसी प्रकार जहां कर्नाटक यातायात और पुलिस चालान को संस्थापन, निपटान और विचाराधीनता आंकड़ों में गणना नहीं करता वहीं अधिकांश अन्य उच्च न्यायालय ऐसा करते हैं । इस भिन्नता को ध्यान में रखते हुए, आयोग के मतानुसार विशे-ाकर हाल ही में उपलब्ध आंकड़े की दृ-टि से पैन-इंडिया सिफारिशें करने के लिए राज्यों की परस्पर तुलना बहुत अधिक समुचित नहीं होगी ।

सभी उच्च न्यायालयों से समुचित आंकड़े प्राप्त करने के अलावा मुख्य चुनौती इसकी परिशुद्धता का अवधारण करना था । आंकड़ों के गहन संवीक्षा पर संभाव्य त्रुटियां देखी जा सकती हैं । उदाहरणार्थ, दिल्ली उच्च न्यायालय से प्राप्त आंकड़ा यह उपदर्शित करता है कि 2010 में, 40054 परक्राम्य लिखत अधिनियम मामले दिल्ली अधीनस्थ न्यायालयों में संस्थित किए गए थे और 111517 निपटाए गए । चूंकि संस्थापनों की नकारात्मक संख्या प्रकटतः असंभाव्य है, यह प्रतीत होता है कि यह संख्या पिछले ढेर मिलान को संतुलित करने हेतु और लंबित परक्राम्य लिखत अधिनियम मामलों[17] की संख्या में पूर्व भूल को ठीक करने के लिए अंतःस्थापित की गई । यह ज्ञात नहीं है कि इस तरह कितनी अन्य त्रुटियां न हुई हों । यह भी पिछला ढेर मिलान को ठीक करने के लिए सांख्यिकी को ऐसा समायोजित करने और तब प्रस्तुत व-र्ा में संस्थापनों की संख्या का दुर्व्यपदेशन करने से कुल संस्थापन दर भी मिथ्या वर्णित हो जाएगा ।

इसी प्रकार, कई उच्च न्यायालयों के संस्थापन, निपटान और विचाराधीनता के आंकड़ों का मिलान व-र्ानुसार नहीं होता ।[18] आंकड़े के स्रोतों के बीच भी विसंगतियां हैं। कुछ मामलों में, पहली प्रश्नावली (उपाबंध-।) के उत्तर में प्राप्त आंकड़े और दूसरी प्रश्नावली (उपाबंध-।।) से प्राप्त आंकड़ों से मेल नहीं खाते । तथापि, इन त्रुटियों और अस्प-टीकृत विसंगतियों में, आयोग ने सामान्य और निकटतम पैटर्न समझने के लिए व्यापक रुझान विश्ले-णों का ही सतर्कता से उपयोग कर इन आंकड़ों पर विचार किया ।

तथापि, वर्तमान आंकड़ा संचयन में किसी एकरुपता के अभाव और विभिन्न उच्च न्यायालयों में आंकड़ों की गुणता में कतिपय कमी के कारण आयोग दृढ़तापूर्वक यह सिफारिश करता है कि एक समान आंकड़ा संचयन और आंकड़ा प्रबंधन रीति विकसित करने के लिए तत्काल कदम उठाए जाएं । ऐसे उपाय, यदि शीघ्र किए जाएंगे तो यह न्यायिक प्रणाली में पारदर्शिता और अधिक महत्वपूर्ण पूर्ण नीति निर्धारण का सुकर बनाया जाना सुनिश्चित करेंगे । इस प्रक्रम पर, कैवियट जोड़ा जाए, क्योंकि जहां तक वर्तमान कार्य का संबंध है, यह व्यापकतः उच्च न्यायालयों द्वारा दी गई नवीनतम जानकारी पर अवलंबित है ।

---

[17] व-र्ा 2009 के अंत में, 416700 मामले लंबित थे जबकि 2010 के अंत में 265129 मामले थे ।

[18] उदाहरणार्थ, दिए गए व-र्ा (एन) में विचाराधीनता (पीएन) पूर्व व-र्ा (पीएन-1) + एन (1एन) में संस्थापन - एन (डीएन) में निपटान करने पर विचाराधीनता के समान होना चाहिए । इस फार्मूले को इस प्रकार व्यक्त किया जा सकता है : (पीएन) = (पीएन-1) + 1एन - डी.एन.

आ. आंकड़ों का विश्ले-ण

उपाबंध -3 उच्चतर न्यायिक सेवा प्रवर्ग के संबंध में 2002-2012 की अवधि में संस्थापन, निपटान, विचाराधीनता और न्यायाधीश की संख्या का आंकड़ा उपलब्ध कराता है । आंकड़ा यह दर्शित करता है कि पिछले दशक में इस प्रवर्ग में कुल संस्थापन, निपटान और विचाराधीनता की संख्या में वृद्धि होती जा रही है । निम्नलिखित चार्ट इस रुझान को स्प-ट करता है :

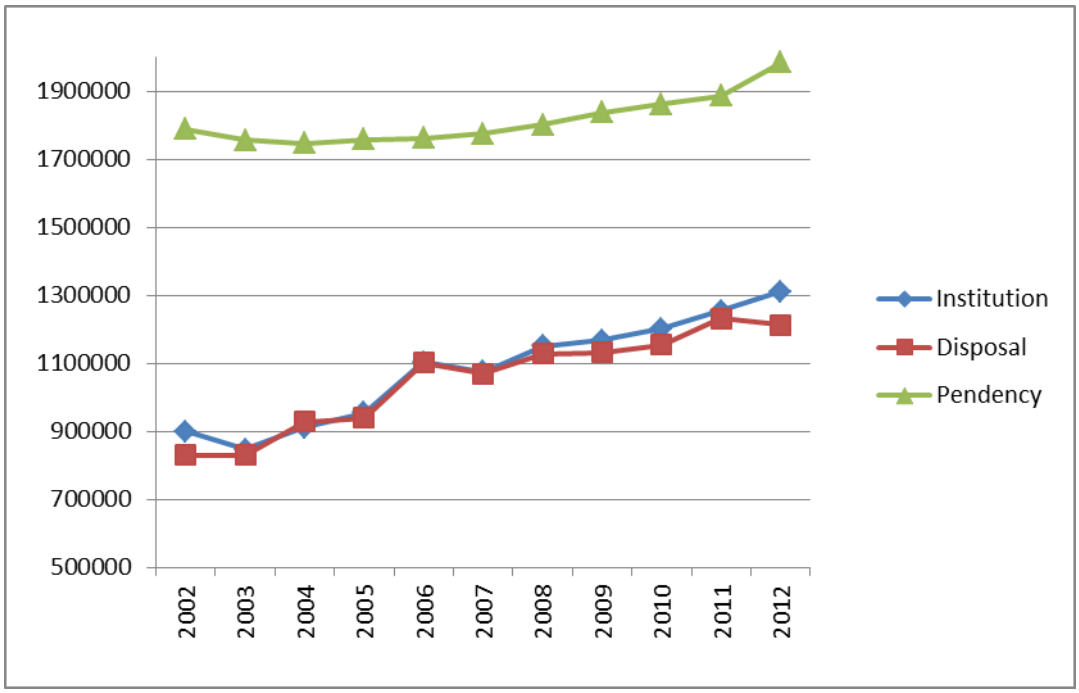

चित्र 1 : उच्चतर न्यायिक सेवा 2002-2012 में संस्थापन, निपटान, विचाराधीनता

उपाबंध - 4 अधीनस्थ न्यायिक सेवा प्रवर्ग से संबंधित व-र्ा 2002 - 2012 अवधि का संस्थापन, निपटान, विचाराधीनता और न्यायाधीश संख्या का आंकड़ा उपलब्ध कराता है । आंकड़े में यह दर्शित है कि संस्थापन, निपटान और विचाराधीनता के वार्-िक दर में पिछले कुछ व-र्ों से 2002-2012 में वृद्धि हुई है, विचाराधीनता में कमी आ रही है जबकि संस्थापन और निपटान लगभग स्थिर हैं । निम्नलिखित चार्ट इस आंकड़े को इंगित करता है :

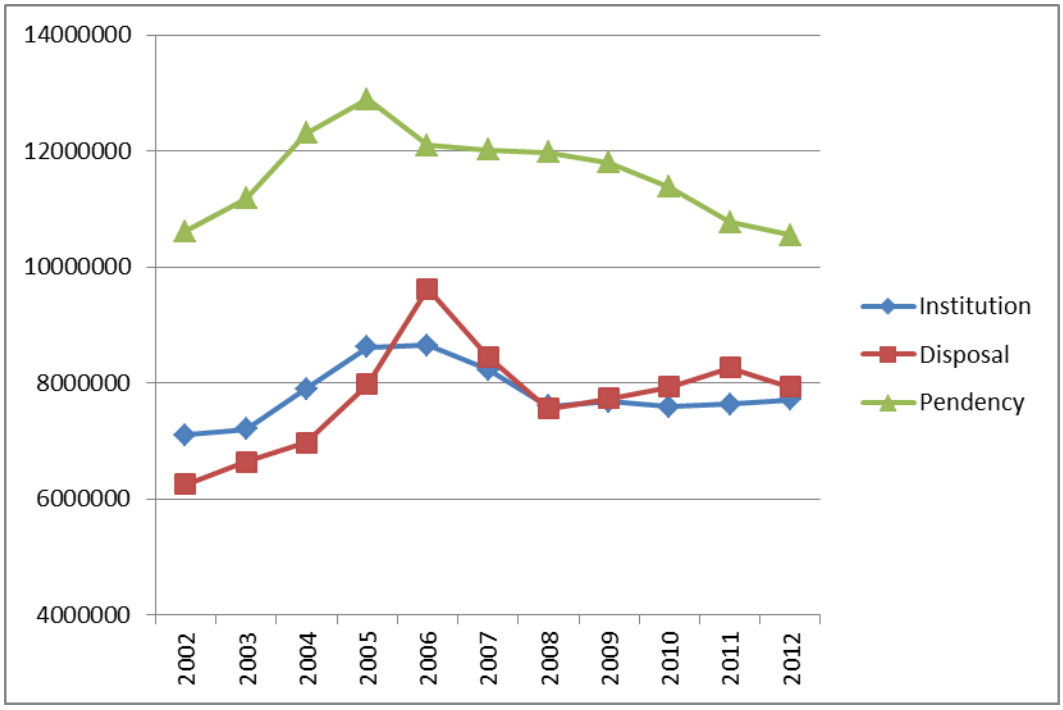

चित्र 2 : अधीनस्थ न्यायिक सेवा 2002-2012 में संस्थापन, निपटान, विचाराधीनता

उच्चतर न्यायिक सेवा का आंकड़ा भी यह उपदर्शित करता है कि वर्ष 2002-2012 की अवधि कुल मिलाकर किसी एक वर्ष में निपटाए गए मामले की तुलना में कहीं अधिक मामले संस्थित किए गए । परिणामतः, प्रणाली में पिछला ढेर सृजित हो रहा है।

निम्नलिखित चित्र 3 और 4 2002-2012 की अवधि का पिछला ढेर सृजन दर दर्शित करता है । पिछला ढेर सृजन दर किसी एक वर्ष में संस्थापन और निपटान का अनुपात है । यदि अनुपात एक से अधिक है तो इसका यह अभिप्राय है कि निपटाए गए मामलों से अधिक मामले संस्थित हो रहे हैं । यदि अनुपात एक से कम है तो संस्थित कि गए मामलों से अधिक मामले निपटाए जा रहे हैं । अतः, 1 से कम संख्या यह उपदर्शित करती है कि न्यायिक प्रणाली नए संस्थापनों से निपटने में सक्षम है ।

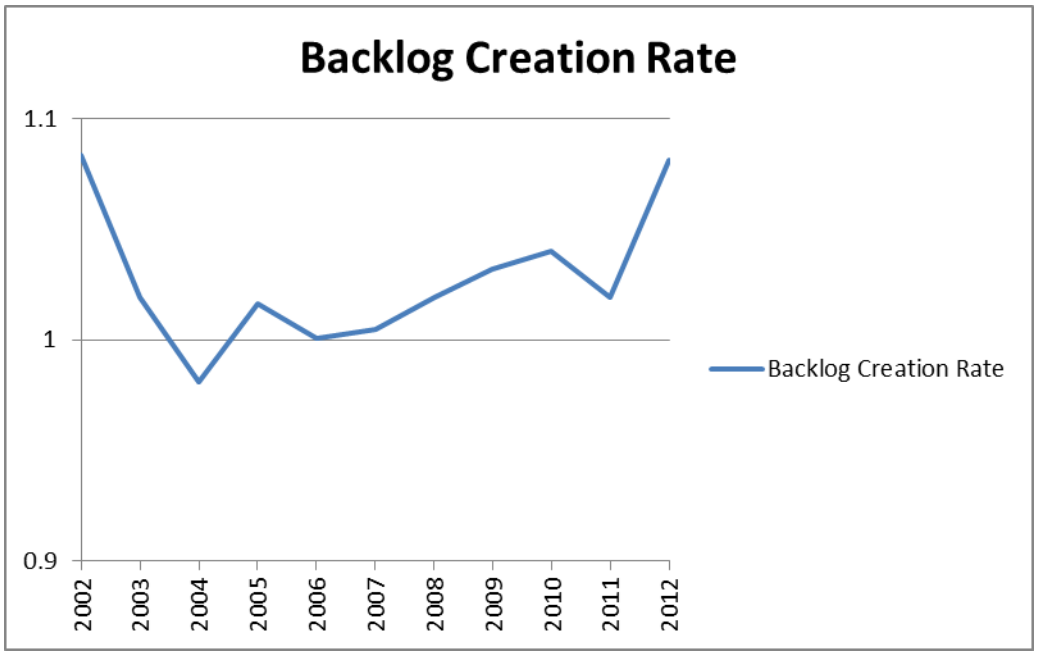

चित्र 3 : उच्चतर न्यायिक सेवा 2002-2012 का पिछला ढेर सृजन दर (संस्थापन/निपटान)

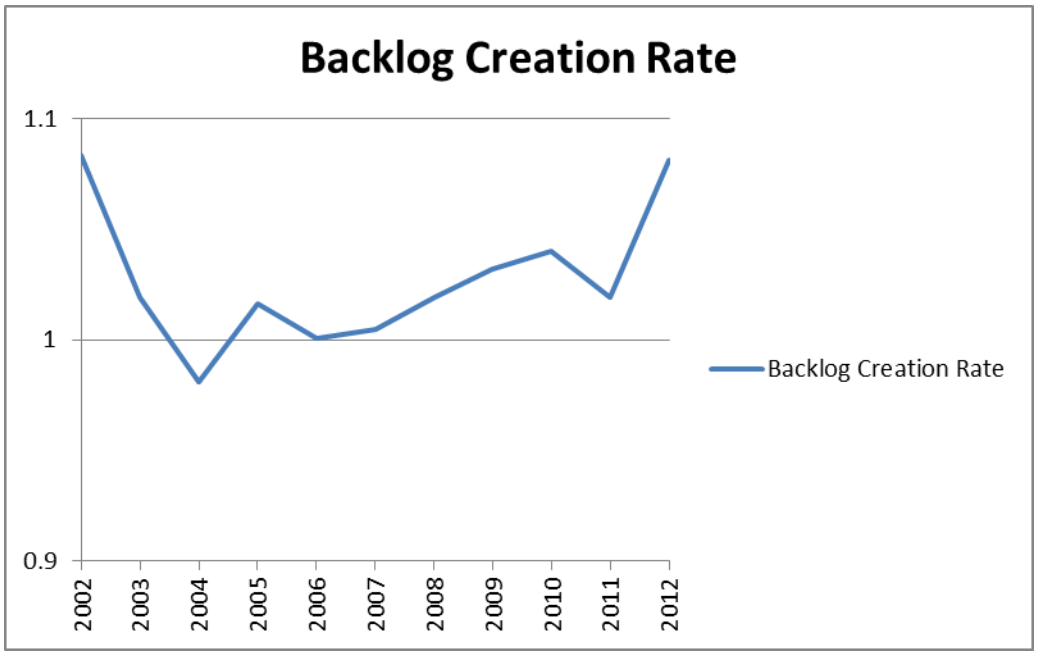

चित्र 4 : अधीनस्थ न्यायिक सेवा 2002-2012 का पिछला ढेर सृजन दर (संस्थापन/निपटान)

उपरोक्त उपदर्शित आंकड़ों के अनुसार उच्चतर न्यायिक सेवा संस्थित किए गए मामलों से कुछ कम मामलों का निपटान कर रही है । इस प्रकार यह प्रणाली में मामलों के पिछले ढेर में वृद्धि कर रही है । दूसरी ओर, अधीनस्थ न्यायिक सेवा में, निपटान दर संस्थापन दर से अधिक है जिसका यह आशय है कि पिछला ढेर कम हो रहा है । यहां यह इंगित किया जाना चाहिए कि पिछला ढेर सृजन विश्ले-ण यह उपदर्शित नहीं करता कि क्या वहीं मामले जो एक व-र्ा में फाइल किए गए थे, का निपटान उसी व-र्ा में हुआ । बल्कि यह व्यवस्थागत परिप्रेक्ष्य पर ध्यान देता है और यह देखा जाना चाहिए कि कितने नए मामले फाइल किए जा रहे हैं और सापेक्षतः कितने मामले निपटाए जा रहे हैं । अतः, न्यून पिछला ढेर सृजन दर उपदर्शित करता है कि संपूर्ण प्रणाली न्यायिक सेवाओं की आवर्ती वार्-िक मांग से निपटने में असमर्थ हैं, इसलिए अतिरिक्त संसाधनों की आवश्यकता है ।

जैसाकि पहले उल्लेख किया गया है, पिछला ढेर सृजन दर उस व-र्ा में प्रणाली में आने वाले और निर्गत होने वाले मामलों की संख्या पर केंद्रित करता है और पहले से ही पिछले ढेर के मामलों को हिसाब में नहीं लेता जो व-र्ानुसार अग्रे-नित हो रहे हैं ।

यह समझने के लिए कि न्यायालय कितनी ठीक तरह से पहले से ही हुए पिछले ढेर वाले मामलों से निपट रहे हैं, विचाराधीनता निकासी समय उपयोगी है । यह आंकड़ा व-र्ा के अंत में विचाराधीनता को उस व-र्ा में निपटाए गए द्वारा विभाजित कर प्राप्त किया गया है और समय ऐसी मात्रा को उपदर्शित करता है कि उसे सभी लंबित मामलों के निपटान में कितना समय लगेगा यदि कोई नया मामला फाइल नहीं किया जाता । निम्नलिखित आंकड़ा क्रमशः उच्चतर न्यायिक सेवा और अधीनस्थ न्यायपालिका हेतु 2002-2012 अवधि में वार्-िक विचाराधीनता निकासी समय को उपदर्शित करता है।

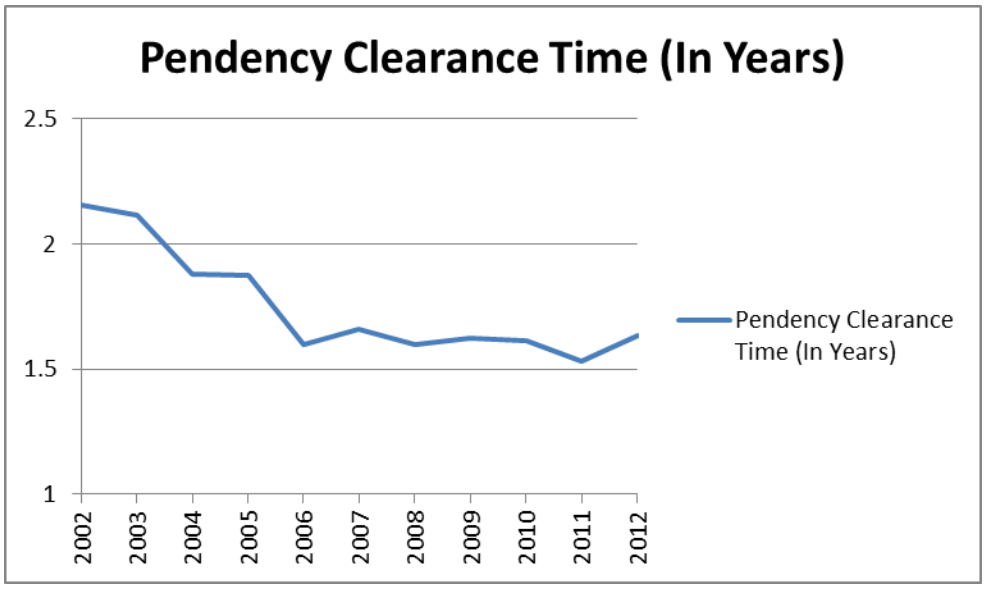

चित्र 5 : उच्चतर न्यायिक सेवा 2002-2012 का विचाराधीनता निकासी समय

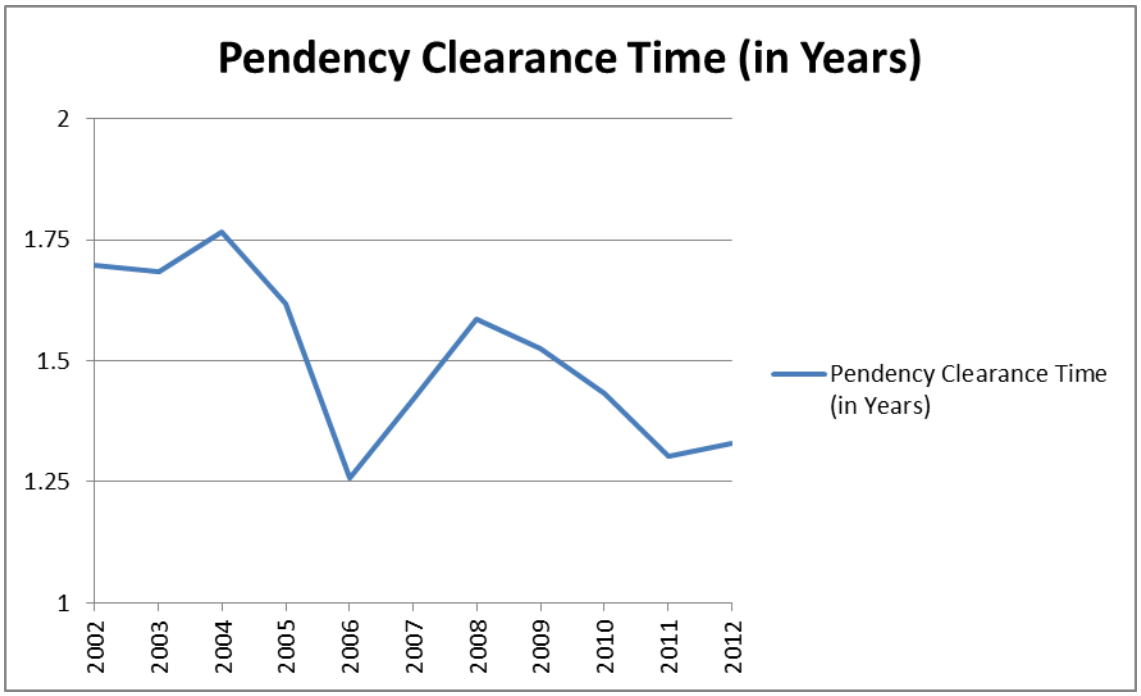

चित्र 6 : उच्चतर न्यायिक सेवा 2002-2012 का विचाराधीनता निकासी समय

चित्र 5 और 6 उपदर्शित करता है कि उच्चतर न्यायिक सेवा और अधीनस्थ न्यायिक सेवा दोनों के लिए विचाराधीनता की निकासी में लगने वाले समय में 2002-2012 अवधि के दौरान कमी आई है । इसका यह आशय है कि कुल मिलाकर प्रणाली वर्ष 2002 की तुलना में 2012 की समाप्ति पर मामलों की कार्यवाही तेजी से कर रही है । जबकि ये आंकड़े ऐसे मामलों के प्रकार को उपदर्शित नहीं करते जिनकी कार्यवाही प्रणाली के माध्यम से हो रही है, आंकड़े प्रणाली की संपूर्ण परिदृश्य उपलब्ध नहीं कराते और पिछले दशक में प्रणाली के व्यापक प्रक्षेप-पथ को उपदर्शित नहीं करते ।

आंकड़ा यह भी उपदर्शित करता है कि पिछले तीन वर्षों में उच्च न्यायालयों में संस्थापनों का 38.7% और अधीनस्थ न्यायिक सेवा के समक्ष सभी लंबित मामलों का 37.4% यातायात और पुलिस चालान हैं ।[19] परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के अधीन अतिरिक्त 6.5% और 7.8% मामले क्रमशः संस्थापन और विचाराधीनता के हैं ।[20] उपाबंध 5 अंकीय आंकड़ा उपलब्ध कराता है

[19] उपाबंध 5 देखें । यह उल्लेखनीय है कि कर्नाटक संस्थापन, निपटान और विचाराधीनता के अपने समग्र आंकड़े में यातायात और पुलिस चालन के आंकड़ सम्मिलित नहीं करता ।

[20] वहीं, बम्बई उच्च न्यायालय ने अपने अधीनस्थ न्यायालयों के समक्ष लंबित परक्राम्य लिखत अधिनियम मामलों की संख्या की जानकारी उपलब्ध नहीं कराई । इसके अलावा केरल उच्च न्यायालय ने केवल सिविल न्यायाधीश जूनियर डिवीजन काडर के ही परक्राम्य लिखत अधिनियम आंकड़े उपलब्ध कराए । अतः, परक्राम्य लिखत अधिनियम मामलों के संस्थापन और विचाराधीनता का औसत सिविल न्यायाधीश जूनियर डिविजन काडर के समग्र संस्थापन और विचाराधीनता के आंकड़ों पर निकाला गया है ।

और निम्नलिखित आंकड़े यातायात/ पुलिस चालन और परक्राम्य लिखत अधिनियम वाले मामलों के आंकड़े सहित संस्थापन और विचाराधीनता के राज्य-वार ब्यौरे उपलबध कराते हैं ।

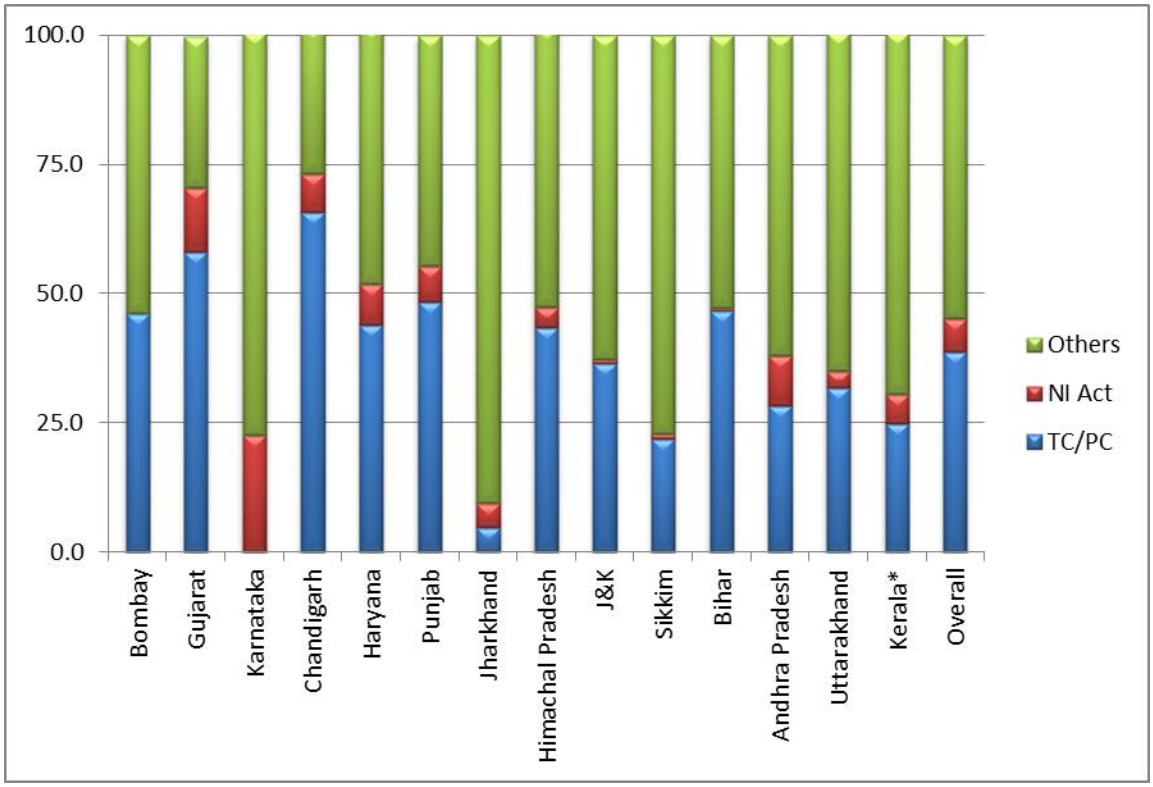

चित्र 7 : अधनीनस्थ न्यायिक सेवा 2010-2012 का यातायात/पुलिस चालान और परक्राम्य लिखत अधिनियम मामलों की प्रतिशतता का राज्यवार संस्थापन आंकड़ा

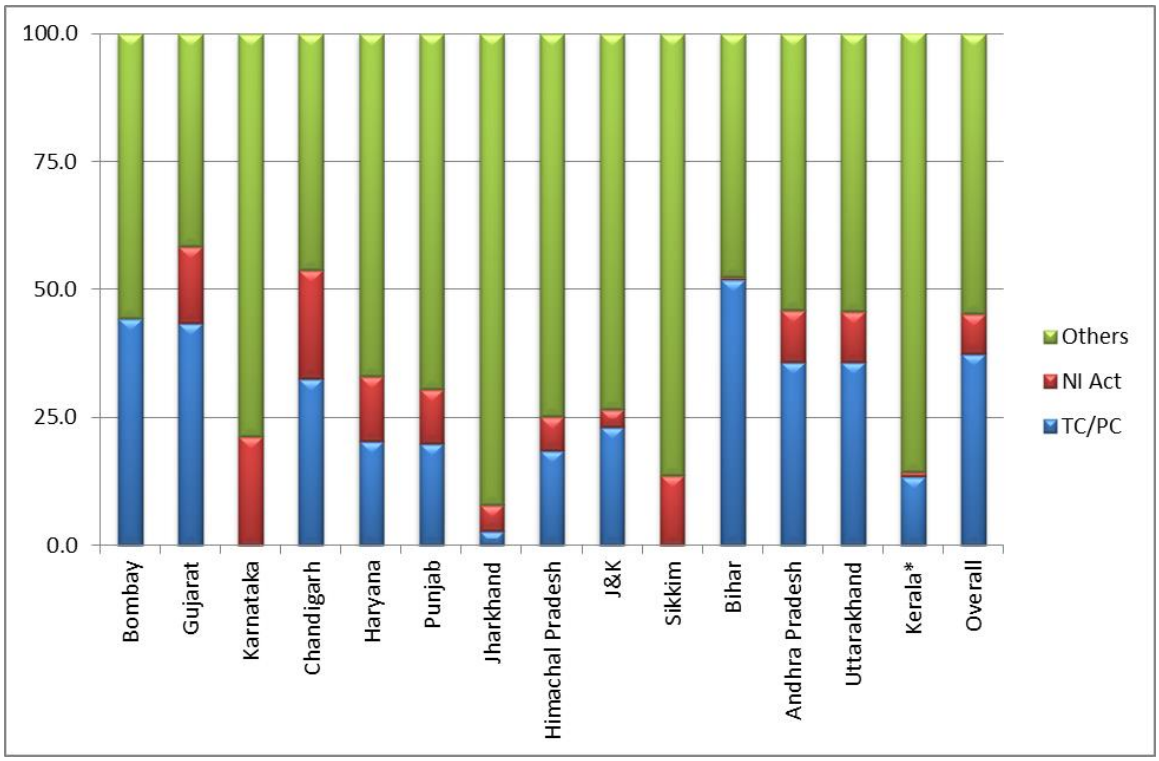

चित्र 8 : अधनीनस्थ न्यायिक सेवा 2012 को समाप्त यातायात/पुलिस चालान और परक्राम्य लिखत अधिनियम मामलों की प्रतिशतता का राज्यवार लंबित आंकड़ा

सामान्यतः यातायात और पुलिस चालान के मामलों में अधिक न्यायिक उलझन की अपेक्षा नहीं होती । तथापि, ऐसे मामलों की अधिक मात्रा की स्थिति में, उनमें संचित रूप से काफी न्यायिक समय लगता है । इन अधिकांश मामलों में जुर्माने को संदाय व्यवहृत होता है और प्रायः पक्षकारों द्वारा इसका विरोध किया जाता है । ऐसे मामलों के लिए, आनलाइन जुर्माना देने की समर्थता के द्वारा प्रणाली के स्वतःचलन या न्यायालय परिसर में अभिहित काउंटर पर जुर्माना अदा करने की व्यवस्था से न्यायालय का काफी महत्वपूर्ण समय बच सकता है । शे-न के लिए आयोग विचार करता है कि नियमित न्यायालयों के अलावा पृथक विशे-न यातायात न्यायालय के सृजन से नियमित न्यायालय के भार में काफी कमी आ सकेगी । ये विशे-न न्यायालय दो पारी (प्रातःकाल और सायंकाल) में बैठ सकेंगे । चूंकि अधिकांश ऐसे मामलों का विरोध नहीं होता है और अधिवक्ता सम्मिलित नहीं होते, इसलिए पारी प्रणाली से अन्य पणधारियों को असुविधा होने की संभावना नहीं है । वस्तुतः, सायंकालीन न्यायालय पारी से पक्षकारों को कार्य समय के पश्चात् न्यायालय आने और अपने जुर्माने का संदाय करने में सहायता प्राप्त होने की संभावना है । हाल ही के विधि स्नातकों की भर्ती इन न्यायालयों की अध्यक्षता करने के लिए अस्थायी आधार पर (अर्थात् 3 व-र्ा की अवधि के लिए) की जा सकती है ।[21] तथापि, ऐसे मामले जिसमें कारावास की संभावना हो, का विचारण

[21] इन पदों के लिए हाल ही के विधि स्नातकों को किराए पर लेने का अतिरिक्त फायदा यह है कि यातायात न्यायालय की अध्यक्षता करने से इन विधि स्नातकों को अनुभव प्राप्त होगा और न्यायिक प्रणाली के आंतरिक क्षेत्र में कार्य करने से मुकदमेबाजी या न्यायिक सेवा में जीविका के लिए संभवतः एक मूल्यवान कदम है ।

नियमित न्यायालयों द्वारा किया जाना चाहिए ।

इस प्रकार, प्रदान किए गए आंकड़ों के सामान्य विश्ले-ण से यह दर्शित होता है कि अधीनस्थ न्यायालयों के संस्थापन, निपटान और विचाराधीनता आंकड़ों में दोहरी गणना की काफी मात्रा है और इस प्रकार प्रणाली द्वारा प्रक्रियागत किए जा रहे मामलों की कुल मात्रा उच्च न्यायालयों द्वारा दिए गए आंकड़ों से काफी कम है । आंकड़ों से यह भी स्प-ट है कि अधीनस्थ न्यायिक सेवा के समक्ष मामलों का अधिक अनुपात यातायात और पुलिस चालान जैसे छोटे मामलों को जोड़कर है । जैसाकि पहले सुझाया गया है, यह दोहराया जाता है कि इन छोटे मामलों पर विचार नियमित न्यायालयों के अलावा विशे-ा प्रातःकालीन और सायंकालीन न्यायालयों द्वारा बेहतर ढंग से किया जा सकता है। परिणामतः, नियमित न्यायालयों पर भार काफी कम हो जाएगा ।

इ. पर्याप्त न्यायाधीश संख्या की संगणना करने की पद्धति

पर्याप्त न्यायाधीश संख्या की अधिकांश चर्चा में प्रायः निर्दि-ट तरीके इस प्रकार हैंः न्यायाधीश जनसंख्या अनुपात, न्यायाधीश-फाइलिंग अनुपात, आदर्श मामला-भार तरीका, समय आधारित तरीका और निपटान दर तरीका । इन तरीकों का संक्षेप में विश्ले-ण करने और उनके पक्ष और विपक्ष में विचार करने के पश्चात् रिपोर्ट निपटान दर तरीके के अधिक पक्ष में है ।

1. न्यायाधीश - जनसंख्या अनुपात और न्यायाधीश-फाइलिंग अनुपात

यह अवधारित करने के लिए कि न्यायिक प्रणाली में कितने न्यायाधीशों की अपेक्षा है, सामान्यतः हमेशा एक तरीके का पक्षपो-ण किया जाता है वह है न्यायाधीश-जनसंख्या अनुपात अर्थात् जनसंख्या में प्रति दस लाख व्यक्तियों पर न्यायाधीशों की संख्या ।[22] आयोग इस तरीके को बहुत अपूर्ण पाता है क्योंकि ऐसी कोई वस्तुनि-ठ संख्या नहीं है जिसके प्रतिनिर्देश द्वारा हम यह अवधारित कर सकें कि क्या किसी राज्य का न्यायाधीश-जनसंख्या अनुपात पर्याप्त है । यह ज्ञात है कि प्रति व्यक्ति फाइलिंग पूरे भौगोलिक इकाई में सारतः अलग-अलग है । प्रति व्यक्ति फाइलिंग आर्थिक और सामाजिक स्थिति से सहयोजित है और कुल 50 के गुणक तक पूरे भारत के राज्यों में

---

[22] **अखिल भारतीय न्यायाधीश संगम** बनाम **भारत संघ** (2002) 4 एस. सी. सी. 247 ''ऐसे उपाय के अलावा जो न्यायिक अधिकारियों की दक्षता बढ़ाने के लिए आवश्यक हो सकते हैं, हमारी यह राय है कि पहली नजर में प्रति 10 लाख लोगों पर 10.5 या 13 के विद्यमान अनुपात से बढ़ाकर प्रति 10 लाख लोगों पर 50 न्यायाधीश करने का निदेश देकर संविधान के एक स्तंभ अर्थात् न्यायिक प्रणाली का संरक्षण करने का समय अब आ गया है ; **पी. रामचन्द्र राव** बनाम **कर्नाटक राज्य** (2002) 4 एस. सी. सी. 578 ('हमारे देश में न्याय प्रदान करने में विलंब का मुख्य कारण बुरा न्यायाधीश जनसंख्या अनुपात है ।') ; और अधिक न्यायाधीशों की आवश्यकता है, राज्य को पहल करनी चाहिए, मनमोहन सिंह का कहना है, टाइम्स आफ इंडिया, 7 अप्रैल, 2013 http://articles.timesofindia.indiatimes.com/2013-04-07/india/38345513_1_three-crore-cases-india-altamas-kabir-judicial-reforms (प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह वर्तमान न्यायाधीश-जनसंख्या दर ''घोर अपर्याप्त'') ; भारत का विधि आयोग, एक सौ बीसवीं रिपोर्ट न्यायपालिका में मानवशक्ति आयोजना ; एक रूपरेखा (1987) (जनसंख्या-न्यायाधीश अनुपात में पांच गुना वृद्धि की सिफारिश किया और भारत में 2000 तक वही जनसंख्या-न्यायाधीश अनुपात होना चाहिए जैसा यूनाइटेड स्टेट्स में 1981 में था)

अलग-अलग हो सकती है ।[23] इस प्रकार, विभिन्न समाजों की न्याय की आवश्यकताएं अलग-अलग होती हैं और इस बावत कोई सार्वभौमिक मानक विहित नहीं किया जा सकता । अतः, जहां जनसंख्या स्वास्थ्य देखभाल और पो-णहार जैसी अन्य आवश्यक सेवाओं की उपलब्धता को मापने का समुचित पैमाना हो सकता है, वहीं यह न्यायिक सेवाओं की अपेक्षा को मापने का समुचित मानक नहीं है ।

विभिन्न चर्चाओं में प्रायः निर्दि-ट एक अन्य समरूप तरीका संस्थापन न्यायाधीश अनुपात पर विचार करना है ।[24] यह उल्लेख करता है कि कोई राज्य उस राज्य के भीतर न्यायिक सेवा की मांग के विद्यमान पैटर्न के सापेक्ष कितने न्यायाधीश रखता है । तथापि, यहां पुनः प्रति 1000 संस्थित मामलों पर न्यायाधीशों की कोई आदर्श संख्या नहीं है जिसके प्रतिनिर्देश द्वारा कोई यह अवधारित कर सके कि क्या राज्य को अधिक न्यायाधीशों की आवश्यकता है या नहीं, और है तो कितने न्यायाधीशों की । इसके अतिरिक्त, संस्थापन आंकड़े प्रायः वाद क्षेत्र और उन वाद को संस्थित करने वालों की सामाजिक पहचान के आधार पर भिन्न-भिन्न होते हैं । सामाजिक रूप से सीमांत समूहों से न्यायालय की पहुंच की कमी के कारण कम संस्थापन दर की संभावना है ।[25] संस्थापन आंकड़ों में भी भौगोलिक स्थिति के आधार पर परिवर्तन हो सकता है । दूर-दराज क्षेत्र, जहां न्यायालयों की वास्तविक पहुंच एक समस्या है, से जनसंख्या वाले क्षेत्रों की तुलना में कम संस्थापन आंकड़े हो सकते हैं । निःसंदेह, जहां न्यायाधीश संस्थापन अनुपात के तरीके को अस्वीकार करने का यह स्वयं ही कारण नहीं है किंतु वे सतर्क करते हैं कि मात्र कुछ आदर्श अनुपात पूरा करने से समाज की न्याय की आवश्यकता निश्चित ही पूरी नहीं होगी ।

2. आदर्श मामला भार तरीका

समुचित न्यायाधीश संख्या नियत करने के लिए कभी-कभी पक्षपोनित एक अन्य तरीका आदर्श मामला भार तरीका है । तरीका ऐसे मामलों की आदर्श संख्या अवधारित करने की अपेक्षा करता है जितना किसी न्यायाधीश को अपनी कार्यसूची में रखना चाहिए । कुल मामला भार (विद्यमान विचाराधीनता और नए संस्थापन) का तब विभाजन प्रणाली द्वारा अपेक्षित न्यायाधीशों की संख्या का प्राक्कलन करने के लिए आदर्श मामला भार से किया जा सकता है । जहां प्रति न्यायाधीश मामलों की संख्या आदर्श मामला भार से अननुपातिकतः अधिक है वहां अतिरिक्त न्यायाधीशों की भर्ती की

---

[23] थ्योडोर आइजनवर्ग, सीतल कालात्री और निक राबिन्स, भलाई के उपाय के रूप में मुकदमेबाजी, 62(2) डी पाल ला रिव्यू 247 (2013) (विभिन्न भारतीय राज्यों का सापेक्ष सिविल फाइलिंग दर का वर्णन और दर्शित करना कि सिविल फाइलिंग दर मानव विकास इन्डेक्स पर प्रतिव्यक्ति उच्चतर जी.डी.पी. और उच्चतर स्कोर वाले राज्यों में उच्च था)

[24] फ्लैन्गो, ओस्ट्राम और फ्लैन्गो, राज्य न्यायाधीशों की आवश्यकता का निर्धारण कैसे करते हैं ? 17 स्टेट कोर्ट जर्नल 3(1993) (तरीके के रूप में न्यायाधीश संस्थापन/फाइलिंग अनुपात सहित विभिन्न तरीका जिसका उपयोग यूनाइटेड स्टेट के कुछ राज्यों में यह परिकलन हेतु किया जाता है कि विशि-ट न्यायालय में नियुक्त किए जाने के लिए कितने न्यायाधीशों की आवश्यकता है)

[25]

जानी अपेक्षित है ।[26]

व्यवहार में आदर्श मामला भार तरीके को लागू करना कठिन लगता है । पहला किसी व्यापक अध्ययन का अभाव है, यह अवधारित करने के लिए कोई नियत मानदंड नहीं निकाल सकता कि आदर्श मामला भार क्या होना चाहिए । साधारणतः, आदर्श मामला भार तदर्थ आधार पर नियत किए जाते हैं । उदाहरणार्थ, विधि आयोग ने तारीख 28.05.2012 के पत्र सं. 6(3)/224/2012-एल.सी.(एल.एस.) द्वारा उच्च न्यायालयों से ''युक्तियुक्त कार्यभार जो न्यायालयों के प्रत्येक प्रवर्ग (जिला न्यायाधीश, सीनियर सिविल न्यायाधीश, जूनियर सिविल न्यायाधीश/मजिस्ट्रेट) बेहतर और शीघ्र न्याय की पहुंच स्थापित करने हेतु बोझ वहन कर सकते हैं'' उपलब्ध कराने के लिए कहा । तथापि, विभिन्न उच्च न्यायालयों से प्राप्त जानकारी से प्रकट हुआ कि राज्यों में न्यायाधीश के प्रत्येक काडर के लिए आदर्श मामला भार की माप काफी अलग-अलग है । इस प्रकार, उदाहरण के लिए, उच्चतर न्यायिक सेवा के लिए युक्तियुक्त कार्यभार मध्य प्रदेश में 120, आंध्र प्रदेश में 500, जम्मू और कश्मीर में 750 और उड़ीसा में 1000 होना सुझाया गया था । राज्यों के बीच इनका व्यापक परिवर्तन भागतः आदर्श मामला भार अवधारित करने के लिए तार्किक आधार की कमी का परिणाम है ।[27]

दूसरा, भिन्न-भिन्न प्रकार के मामलों के लिए भिन्न-भिन्न न्यायिक समय की अपेक्षा होती है । उदाहरणार्थ, छोटे अपराध के संक्षिप्त विचारण की तुलना में हत्या विचारण में सामान्यतः काफी अधिक समय लगने की संभावना है । आदर्श मामला भार दृ-टिकोण जो न्यायाधीश के समक्ष केवल फाइलों की संख्या ही देखता है, दोनों मामलों को समान मानता है यद्यपि 500 हत्या मामलों वाले न्यायाधीश पर अधिक भार होने की संभावना है वहीं 500 संक्षिप्त विचारण वाले न्यायाधीश के समय का बहुत कम ही उपयोग होता है । फायदाप्रद होने के लिए आदर्श मामला भार तरीका किसी न्यायाधीश के समक्ष संभावित रूप से आने वाले मामलों के प्रकार के कुछ विश्ले-ण की अपेक्षा करता है । यह भी कि मामले के प्रत्येक प्रकार के मामले में सामान्यतः लगने वाले समय की मात्रा के संबंध में विश्ले-ण करने की आवश्यकता है । ऐसा विश्ले-ण संभवतः ऐसी धारणा प्रदान करेगा कि किसी न्यायाधीश के समक्ष कौन से तथ्य 'आदर्श मामला भार' गठित करेंगे । तथापि, सतर्क रहने की आवश्यकता है क्योंकि उदाहरणार्थ, नई विधियों के उद्भव होने और अधिकारों की बढ़ती जागरूकता के कारण विद्यमान मिश्रित मामले में बहुत तेजी से परिवर्तन होता है । उदाहरण के लिए, परक्राम्य लिखत अधिनियम की वर्तमान धारा 138 व-र्ा 2002 में परक्राम्य लिखत (संशोधन और प्रकीर्ण उपबंध) अधिनियम, 2002 (2002 का 55) के संशोधन का परिणाम था । इस उपबंध का व्यापक उपयोग किया गया और अधीनस्थ न्यायपालिका के समक्ष मिश्रित मामले के प्रवर्ग में

---

[26] रा-ट्रीय न्यायालय प्रबंध प्रणाली : नीति और कार्रवाई योजना 34 (सितंबर, 2012) पृ-ठ 5.3 ; मुख्य न्यायमूर्तियों के सम्मेलन, 2004 का संकल्प (सीनियर न्यायाधीशों के लिए प्रति व-र्ा 500 मामले और जूनियर सिविल डिवीजन और महानगर मजिस्ट्रेट के लिए 600 मामलों के मानक का प्रस्ताव रखना)

[27] एक अन्य उदाहरण में, मुख्य न्यायमूर्तियों का सम्मेलन, 2004 में सीनियर न्यायाधीशों के लिए प्रतिव-र्ा 500 मामले और जूनियर सिविल न्यायाधीश और महानगर मजिस्ट्रेट के लिए 600 मामलों के मानक का प्रस्ताव किया गया । किसी विस्तृत विश्ले-णात्मक और अनुभवाश्रित निर्धारण पर आधारित न होने के कारण इन आंकड़ों की आलोचना की गई है । भारत विकास फाउंडेशन, न्यायिक प्रभाव निर्धारण : दृ-टिकोण पत्र 72 (2008) http://lawmin.nic.in/doj/justice/judicialimpactassessmentreportvol2.pdf बेबसाइट पर उपलब्ध है ।

मामलों की संख्या और प्रकार में घोर परिवर्तन आया ।

अंततः यदि हमने मिश्रित मामले और आदर्श मामला भार तरीके को लागू करने के लिए अपेक्षित मामला समय का अध्ययन किया होता, तो इस जानकारी का प्रत्यक्ष उपयोग प्रणाली में अपेक्षित न्यायाधीशों की उचित संख्या अवधारित करने में किया जा सकता है । आदर्श मामला भार के मध्य मार्ग की अपेक्षा नहीं होगी । मामला मिश्रण और मामला समय का उपयोग कर न्यायाधीशों की समुचित संख्या अवधारित करने के तरीके की चर्चा नीचे की गई है ।

3. समय आधारित तरीका

न्यायिक प्रणाली में अपेक्षित न्यायाधीशों की संख्या अवधारित करने के लिए प्रायः प्रयुक्त एक अन्य मोडल, उदाहरणार्थ यू.एस. में समय आधारित तरीका है ।[28] मोटे तौर पर, यह तरीका विद्यमान न्यायिक मामला भार की निकासी के लिए अपेक्षित समय का अवधारण करता है । तब यह न्यायिक कार्य के लिए प्रति न्यायाधीश के पास उपलब्ध समय का अवधारण करता है । पहली संख्या को दूसरी संख्या द्वारा विभाजित करने से विद्यमान मामला भार से निपटने के लिए अपेक्षित न्यायाधीशों की संख्या निकलती है ।

अधिक विस्तार से, समय आधारित तरीके में औसतन मामले के विशि-ट प्रकार को विनिश्चित करने में न्यायाधीशों द्वारा लिया गया आदर्श या वास्तविक समय का अवधारण अंतर्वलित है । तब यह न्यायालयों में संस्थित किए जा रहे या लंबित उस प्रकार के मामलों की औसत संख्या का अवधारण किए जाने की अपेक्षा करता है । इसे प्रतिवर्ष उपलब्ध न्यायिक समय की संख्या द्वारा विभाजन करने से उस तरह के मामलों से निपटने हेतु अपेक्षित न्यायाधीशों की संख्या निकलती है । सभी प्रकार के मामलों की इस जानकारी को जोड़ने से कि विशि-ट प्रवर्ग के न्यायाधीश कितने मामले निपटा सकते हैं, मामला भार के निपटान के लिए अपेक्षित न्यायाधीशों की संख्या का पता चलता है ।

यूनाइटेड स्टेट में जहां इस पद्धति का पालन किया जाता है, नेशनल सेंटर फार स्टेट कोर्ट (एन.सी.एस.सी.) न्यायाधीशों द्वारा कतिपय मामलों के समाधान के लिए खर्च किए जाने वाले मिनटों की संख्या का अवधारण करने के लिए अध्ययन करता है । न्यायाधीशों से साक्षात्कार किए जाते हैं और प्रत्येक प्रकार के मामले के समय मूल्य का अवधारण करने के लिए समय-सारणी बनाने की प्रायः अपेक्षा की जाती है ।[29]

एन.सी.एस.सी. द्वारा अनुसरित समय आधारित तरीका आंकड़े के चार भाग कर न्यायाधीशों की संख्या की संगणना करता है :

---

[28] यू.एस. फेडरल न्यायालयों में लिए गए इस दृ-टिकोण का सही विहंगावलोकन फेडरल जूडिशियल सेंटर 2003-2004 जिला न्यायालय मामला : यूनाइटेड स्टेट्स के न्यायिक सम्मेलन की न्यायिक संसाधन समिति की न्यायिक सांख्यिकी की उप समिति की अंतिम रिपोर्ट (2005)

[29] नेशनल सेंटर फार स्टेट कोर्ट, ''दि कैलीफोर्निया जुडिशियल कार्यभार निर्धारण'', 2007 ; नेशनल सेंटर फार स्टेट कोर्ट, माइनेसोटा जुडिशियल कार्यभार निर्धारण'', 2002 ; और नेशनल सेंटर फार कोर्ट, ''नार्थ कैरोलिना सुपीरियर न्यायालय जुडिशियल कार्यभार निर्धारण'', 2001.

1) न्यायालय, जिला में संस्थित मामलों की संख्या और मामले का प्रकार ;

2) औसतन बेंच और गैर-बेंच समय जो न्यायालय के लिए प्रत्येक प्रकार के मामले के समाधान हेतु न्यायालय के भीतर अपेक्षा होती है ।

3) समय की मात्रा जो न्यायाधीश के पास प्रतिवर्ष मामला संबंधित कार्य को पूरा करने के लिए उपलब्ध है ।

4) न्यायालय और जिला में सक्रिय न्यायाधीशों की संख्या

भारतीय न्यायालयों के लिए इस मोडल को लाने के लिए अपेक्षित सभी जानकारी उपलब्ध नहीं है । भारत में, प्रणाली के पास प्रत्येक प्रकार के मामले के समाधान हेतु न्यायाधीशों द्वारा अपेक्षित समय के बारे में कोई जानकारी नहीं है । विलंब में कमी के किसी प्रयास को अग्रसर करते समय पहले यह अवधारित करना है कि प्रणाली में कितने मामले विलंबित हैं । यह ऐसी बात अवधारित करने की अपेक्षा करता है कि विशि-ट प्रकार के मामले के लिए क्या सामान्य समय ढांचा होना चाहिए जैसे कि इस समय ढांचे से परे को विलंबित समझा जाए । न्यायिक प्रणाली के पास ऐसा कोई निर्देश चिह्न नहीं है, अतः, कोई आंकड़ा नहीं है कि (लंबित रहने के प्रतिकूल) कितने मामले विलंबित हैं ।

समय की एक प्रतिनिधि मात्रक हो सकती हैं । क्योंकि न्यायाधीशों से प्रतिमास मात्रक की कतिपय संख्या पूरी करने की अपेक्षा होती है और व्यक्ति प्रतिमास न्यायिक कार्य के लिए प्रति न्यायाधीश उपलब्ध समय जानता है और प्रत्येक मात्रक के समय मूल्य की संगणना कर सकता है । तब व्यक्ति उस प्रकार के मामले की आबंटित मात्रक की संख्या को देखकर प्रत्येक प्रकार के मामले के समय मूल्य का अवधारण कर सकता है । यह उपरोक्त बिंदु 2 में अपेक्षित आंकड़ा उपलब्ध कराएगा । तथापि, दो समस्याएं पैदा होती हैं :

1. मात्रक समय के अच्छे प्रतिनिधि नहीं है । मात्रक न्यायाधीशों के लिए कार्यपालन निर्देश चिह्न के रूप में कार्य करते हैं । इस प्रकार उनका उपयोग भिन्न-भिन्न प्रयोजनों के लिए किया जाता है । प्रायः मात्रकों का उपयोग कतिपय प्रकार के मामलों के शीघ्र निपटान को प्रोत्साहित करने के लिए किया जाता है, उदाहरणार्थ, व-र्षों से कतिपय संख्या के लंबित मामले । दूसरा, उनका उपयोग अधिक उत्पादकता को प्रोत्साहित करने के लिए किया जाता है । अतः, उसी प्रकार के मामले के लिए, कभी-कभी प्रति मामला अधिक मात्रक दिए जाते हैं यदि न्यायाधीश ऐसे मामलों की कतिपय संख्या को पूरा करता है, अतः, मात्रक का आबंटन एकमात्र समय पर आधारित नहीं है ।

2. संस्थापन, निपटान और विचाराधीनता के बारे में आंकड़ा जो उच्च न्यायालय अभिलिखित करते हैं, प्रायः मात्रकों हेतु उपलब्ध जानकारी के सामने ठीक से मेल नहीं खाते । उदाहरणार्थ, जबकि यह ज्ञात रहता है कि दिल्ली के सेशन न्यायालयों के समक्ष भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन संस्थित और लंबित मामलों की संख्या क्या है किंतु यह स्प-ट नहीं है कि प्रत्येक मामले में कितने साक्षियों द्वारा अभिसाक्ष्य दिए जाने की अपेक्षा है । यद्यपि

मात्रक अन्य बातों के साथ-साथ विशि-ट मामले में साक्षियों की संख्या के आधार पर दी जाती है । अतः, यदि कोई प्रत्येक मात्रक का समय मूल्य जानता है तो भी वह न्यायालय के समक्ष संस्थित या लंबित प्रत्येक हत्या मामले का मात्रक मूल्य नहीं जान पाएगा ।

इन्हीं कारणों से, आयोग यह महसूस करता है कि ऐसा कोई दृ-टिकोण जो ''मात्रक का समय के प्रतिनिधि के रूप में'' उपयोग करता है, ठोस दृ-टिकोण नहीं हो सकेगा । समय का कोई अन्य प्रतिनिधि नहीं है और इसके अतिरिक्त इस बाबत कोई वैज्ञानिक आंकड़ा उपलब्ध नहीं है । कहीं अन्यत्र यथा व्यवहृत समय आधारित तरीका भारतीय परिप्रेक्ष्य में लागू या संभाव्य नहीं हो सकता है ।

4. निपटान दर पद्धति

वर्तमान परिदृश्य में, विशे-ाकर आंकड़ा संग्रहण के संपूर्ण और वैज्ञानिक दृ-टिकोण के अभाव में, आयोग मामलों के पिछले ढेर की निकासी के लिए और यह सुनिश्चित करने के लिए कि नए पिछले ढेर का सृजन न हो, अपेक्षित अतिरिक्त न्यायाधीशों की संख्या के परिकलन के लिए निपटान दर तरीके के उपयोग को अधिक व्यावहारिक और उपयोगी पाता है । मोटे तौर पर, यह तरीका दो महत्वपूर्ण चिंताओं को दूर करता है : (क) मामलों का भारी विद्यमान पिछला ढेर और (ख) दैनिक संस्थित होने वाले नए मामले, जो पिछले ढेर को बढ़ा रहे हैं ।

इन दोनों चिंताओं को दूर करने के लिए निपटान दर तरीके का उपयोग दो तरह के न्यायाधीश उपलब्ध कराने के लिए किया जा सकता है : (क) विद्यमान पिछले ढेर के निपटान के लिए अपेक्षित न्यायाधीशों की संख्या और (ख) यह सुनिश्चित करने के लिए अपेक्षित न्यायाधीशों की संख्या कि नए फाइल मामले का ऐसी रीति से निपटान किया जाए कि आगे पिछले ढेर का सृजन न हो ।

संक्षेप में, यह स्प-ट करना अप्रासंगिक नहीं है कि 'निपटान दर तरीका' क्या गठित करता है । निपटान दर तरीके के अधीन, व्यक्ति सर्वप्रथम उस वर्तमान दर पर विचार करता है जिस पर न्यायाधीश मामलों का निपटान करता है । व्यक्ति आगे यह अवधारित करता है कि दक्षता के समान स्तर पर कितने अतिरिक्त कार्यरत न्यायाधीशों की अपेक्षा होगी जिससे कि किसी एक व-र्ा समय ढांचे में संस्थापनों की संख्या के समान निपटान की संख्या हो । जब तक संस्थापन और निपटान दर स्तर वैसा ही नहीं रहता जैसे वे इस समय हैं, न्यायालयों को यह सुनिश्चित करने के लिए कि नए संस्थित मामलों के पिछले ढेर में वृद्धि न हो, नई फाइलिंग के साथ-साथ निपटान करते रहने के लिए इन अतिरिक्त न्यायाधीशों की आवश्यकता होगी ।

दूसरा, प्रति न्यायाधीश मामलों के निपटान के वर्तमान दर के साथ कार्य करते हुए व्यक्ति को इस पर भी विचार करने की अपेक्षा है कि वर्तमान पिछले ढेर के निपटान के लिए कितने न्यायाधीशों की अपेक्षा होगी । वर्तमान में पिछले ढेर को उन मामलों के रूप में परिभाि-त किया गया है जो

प्रणाली में एक व-र्ा से अधिक समय से लंबित हैं ।[30]

यह उल्लेखनीय है कि कुछ समय पूर्व विधि आयोग और अन्य समितियों ने यह सुझाव दिया कि चूंकि पिछले ढेर के निपटान के लिए अपेक्षित न्यायाधीशों की आवश्यकता तब तक है जब तक पिछले ढेर की निकासी नहीं हो जाती, अतः पिछले ढेर की निकासी के प्रयोजन के लिए, सेवानिवृत्त न्यायाधीशों में से अल्प अवधि तदर्थ नियुक्तियां की जाएं ।[31]

हाल ही में, अक्तूबर, 2009 में विधि मंत्री द्वारा प्रस्तुत रा-ट्रीय दूरदर्शी कथन और कार्रवाई योजना ने भी यह सिफारिश की कि सेवानिवृत्त न्यायाधीशों और प्रख्यात अधिवक्ताओं की नियुक्ति बकाया मामलों से निपटने के लिए एक व-र्ा की अवधि के लिए तदर्थ न्यायाधीशों के रूप में की जाए ।[32] तथापि, पूर्व में तदर्थ न्यायाधीशों की नियुक्ति के अनुभव से यह पता चलता है कि ऐसी नियुक्तियों विशे-ाकर तदर्थ न्यायाधीशों के कार्यकरण और कार्यपालन में जवाबदेही की कमी के बारे में गंभीर चिंता है क्योंकि ये अल्पावधि नियुक्तियां हैं ।

इसके अतिरिक्त, यदि तदर्थ न्यायाधीशों की नियुक्ति की जाए तो इन न्यायालयों के लिए अतिरिक्त अवसंरचना का सृजन करना होगा । यद्यपि रा-ट्रीय दूरदर्शी कथन ने अवसंरचना समस्या से निपटने के लिए पारी प्रणाली को अपनाने की सिफारिश की[33], किंतु इस प्रस्ताव का अधिवक्ताओं ने विरोध किया चूंकि यह उनके कार्य समय को काफी बढ़ाता है ।[34]

सार्थकतः, केंद्रीय सरकार, मुख्य न्यायमूर्ति और मुख्य मंत्रियों के सम्मेलन और रा-ट्रीय न्याय परिदान और विधिक सुधार मिशन की सलाहकार परि-ाद्, सबने वर्तमान न्यायाधीशों की संख्या को

---

[30] यद्यपि इस रिपोर्ट में विश्ले-ाण यह अवधारित करने के लिए समय ढांचा के रूप में एक व-र्ा का उपयोग किया गया है कि क्या मामला पिछला ढेर में है या नहीं, विभिन्न उच्च न्यायालयों की आवश्यकताओं के अनुकूल इस समय अवधि को परिवर्तित किया जा सकता है ।

[31] भारत का विधि आयोग, विचारण न्यायालयों में विलंब और बकाया पर 77वीं रिपोर्ट 35 (1978) पृ-ठ 9.13 पर देखें । पर्याप्त न्यायाधीश संख्या की संगणना के लिए, न्यायिक प्रभाव निर्धारण पर न्यायमूर्ति एम. जे. राव समिति के उपाबंध 1 में इसी तरीके की सिफारिश की गई है । न्यायमूर्ति एम. जे. राव रिपोर्ट, जिल्द 2, (http://doj.gov.in/?q=node/121) न्यायिक प्रभाव निर्धारण पर कार्यबल की रिपोर्ट, पृ-ठ 49-521 न्यायमूर्ति मलिमथ कमेटी ने अतिरिक्त न्यायिक संख्या को वर्तमान फाइलिंग के निपटान के लिए अपेक्षित स्थायी न्यायाधीशों में और बकायों को निपटाने के लिए अतिरिक्त तदर्थ न्यायाधीशों का द्विविभाजन करने की सिफारिश की । मलिमथ कमेटी रिपोर्ट, पृ-ठ 1641 गृह मंत्रालय की संसदीय स्थायी समिति, 85वीं रिपोर्ट विधि का विलंब ; न्यायालयों में बकाया 45(2001) (तीन व-र्ा की समय-सीमा के भीतर विचाराधीनता की निकासी के लिए तदर्थ न्यायाधीशों की नियुक्ति की वकालत की) भी देखें । आगे 14वीं विधि आयोग रिपोर्ट, पृ-ठ 148 (इसी प्रकार का विश्ले-ाण करते हुए विधि आयोग ने एक व-र्ा से पुराने मामलों को निपटाने के लिए अस्थायी अतिरिक्त न्यायालयों के सृजन और स्थायी न्यायापालिका की संख्या बढ़ाने की सिफारिश की जिससे कि संस्थापन और निपटान का संतुलन बना रहे और बकायों का नया सृजन न हो ।

[32] पैरा 3.2 और 6.1(i) विचाराधीनता और विलंब को कम करने हेतु न्यायपालिका को मजबूत करने के लिए रा-ट्रीय परामर्श में विधि मंत्री द्वारा भारत के मुख्य न्यायमूर्ति को प्रस्तुत दूरदर्शी कथन, अक्तूबर, 2009.

[33] पैरा 6.1 वही,

[34] 31 मई, 2013 को हुई विधि/गृह सचिव और राज्य के वित्त सचिवों और उच्च न्यायालय के महारजिस्ट्रारों की बैठक का कार्यवृत्त ।

दोगुना करने का प्रस्ताव किया ।[35] न्याय विभाग द्वारा विधि आयोग को दी गई जानकारी के अनुसार, न्यायाधीश की संख्या को दोगुना करने के लिए अपेक्षित निधियों से संबंधित 14वें वित्त आयोग को प्रस्तुत किए जाने वाले ज्ञापन को विरचित करने हेतु केंद्रीय सरकार, राज्य सरकारों और उच्च न्यायालयों का अभी परामर्श चल रहा है । आयोग यह सिफारिश करता है कि चूंकि न्यायाधीश की संख्या दोगुना करने का विनिश्चय पहले ही लिया जा चुका है इसीलिए पिछले ढेर को निपटाने की अपेक्षा हेतु न्यायाधीश स्वयं नई भर्ती में से लिए जा सकते हैं । एक बार पिछला ढेर समाप्त होने पर, इन न्यायाधीशों को नए सिरे से संस्थित मामलों के निपटान के लिए लगाया जा सकता है जो अतिकाल समय को भी बढ़ाएगा ।

विद्यमान न्यायाधीश संख्या को दोगुना करने के लिए अपेक्षित भारी संसाधन, वह समय जो चयन और प्रशिक्षण प्रक्रियाओं को पूरा करने में लगेगा और पर्याप्त अवसंरचना के सृजन हेतु अपेक्षित निधियां तथा समय को ध्यान में रखते हुए, आयोग की यह राय है कि निपटान दर तरीके का उपयोग यह उपदर्शित करने के लिए किया जाना चाहिए कि अंतरिम अवधि के लिए पूर्विकता आधार पर कितने न्यायाधीशों की नियुक्तियां की जाएं। नीचे सारणी I-XII आंकड़े उपलब्ध कराती हैं कि एक, दो या तीन व-र्ों में पिछले ढेर का निपटान करने के लिए कितने न्यायाधीशों को किराए पर

---

[35] 15 मई, 2012 को केंद्रीय विधि मंत्री की अध्यक्षता में रा-ट्रीय न्याय परिदान और विधिक सुधार मिशन के सलाहकार परि-द् की दूसरी बैठक में न्यायाधीश की संख्या दोगुना करने का संकल्प पारित किया गया । संकल्प में कहा गया कि, '' न्यायाधीशों/न्यायालयों की वर्तमान संख्या को बढ़ाकर दोगुना की जाए । किंतु यह धीरे-धीरे 5 व-र् की अवधि में की जाए ।

अप्रैल 5-6, 2013 को हुए मुख्यमंत्रियों और मुख्य न्यायमूर्तियों के सम्मेलन में यह संकल्प पारित किया गया कि ''[न्यायाधीश जनसंख्या अनुपात को संकीर्ण करने के लिए मुख्य न्यायमूर्ति, अखिल भारतीय न्यायाधीश संगम (2002) 4 एस. सी. सी. 247 वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय के निबंधनानुसार सहायक स्टाफ और अपक्षित अवसंरचना के साथ सभी स्तरों के न्यायिक अधिकारियों के नए पदों के सृजन के लिए अपेक्षित उपाय करेंगे], **बृज मोहन राय** बनाम **भारत संघ** (2012)6 एस. सी. सी. 502 और भारत के माननीय मुख्य न्यायमूर्ति द्वारा भारत के प्रधानमंत्री को न्याय के प्रभावी, दक्ष और प्रभावोत्पादक प्रदान के लिए 21 फरवरी, 2013 को लिखा गया पत्र।'' प्रधानमंत्री और विधि मंत्री द्वारा सम्मेलन के अपने भा-णों में न्यायाधीश जनसंख्या अनुपात को दोगुना करने के विनिश्चय का समर्थन किया । दोनों ने आश्वासन दिया कि केंद्रीय सरकार इस प्रयोजन के लिए अतिरिक्त निधि प्रदान कराने में सहायता करेगी । मुख्य न्यायमूर्तियों और मुख्यमंत्रियों के सम्मेलन में प्रधानमंत्री डा. मनमोहन सिंह द्वारा दिया गया भा-ण http://pib.nic.in/newsite/erelease.aspx?relid=94523; देखें । 7 अप्रैल, 2013 को मुख्य न्यायमूर्तियों और मुख्यमंत्रियों के सम्मेलन में विधि मंत्री डा. अश्वनी कुमार दिया गया भा-ण http://pib.nic.in/newsite/erelease.aspx?relid=51882 देखें ।

31 मई, 2013 को विधि/गृह सचिव और राज्य के वित्त सचिवों और उच्च न्यायालयों के महारजिस्ट्रारों की बैठक में, श्री अनिल गुलाटी, संयुक्त सचिव और मिशन निदेशक, न्याय विभाग ने कहा कि रा-ट्रीय न्याय परिदान और विधिक सुधार मिशन के सलाहकार परि-द् के संकल्प को रा-ट्रीय न्यायालय प्रबंधन प्रणाली की सलाहकार समिति और भारत के मुख्य न्यायमूर्ति द्वारा फरवरी, 2013 में उच्च न्यायालयों के मुख्य न्यायमूर्तियों को संबोधित अपने पत्र द्वारा पृ-ठांकित किया गया । राज्य सरकारों और उच्च न्यायालयों के प्रतिनिधियों से संकल्प के वित्तीय उलझनों से संबंधित प्रस्ताव तैयार करने के लिए कहा गया जिससे कि पर्याप्त निधि का उपबंध करने के लिए 14वें वित्त आयोग के समक्ष प्रस्तुत किया जा सके ।

लिए जाने की आवश्यकता है ।[36]

निपटान दर तरीका न्यायिक प्रणाली में पिछले ढेर की समस्या से निपटने के लिए अपेक्षित पर्याप्त न्यायाधीश संख्या तथा अधीनस्थ न्यायपालिका के वर्तमान दक्षता स्तर पर आधारित कच्चा और तात्कालिक परिकलन का मोटा-मोटा अनुमान उपलब्ध कराता है । निम्नलिखित यथा प्रस्तावित फार्मूला अधिकांशतः ऐसे आंकड़े के आधार पर विकसित किया गया है जो आयोग एकत्र कर सका है और संक्षिप्त आंकड़ो से, अपेक्षित रिक्त न्यायाधीशों का और सही अनुमान उपलब्ध कराने में नीचे उपदर्शित फार्मूले को और अधिक अनुरूप पाया जा सकता है । अन्य तरीकों के बारे में व्यक्त चिंताओं और यहां किए गए अन्य विश्ले-ाण को ध्यान में रखते हुए, आयोग का यह मत है कि यहां प्रस्तावित तरीका पर्याप्त न्यायाधीश संख्या अवधारित करने के लिए कारणयुक्त आधार (तदर्थ के विपरीत) उपलब्ध करा सकता है ।

तरीका इस प्रकार है :

1. तरीके का लक्ष्य अधीनस्थ न्यायालय न्यायाधीश, अर्थात् उच्चतर न्यायिक सेवा, सिविल न्यायाधीश सीनियर डिवीजन और सिविल न्यायाधीश जूनियर डिवीजन के प्रत्येक काडर में अपेक्षित न्यायाधीशों की संख्या की संगणना करना है । तरीका विकसित करने के लिए, 2010 से 2012 के अंत तक इन तीन काडरों में से प्रत्येक में संस्थापन, निपटान और न्यायाधीशों की कार्यरत संख्या के आंकड़ों का अलग-अलग विश्ले-ाण किया गया ।

2. न्यायाधीशों के एक काडर (अर्थात् उच्चतर न्यायिक सेवा) के लिए निपटान का विभाजन उस काडर में न्यायाधीशों की कार्यरत संख्या द्वारा किया जाता है । कार्यरत संख्या रिक्तियों और प्रतिनियुक्तियों को घटाकर अनुमोदित संख्या को निर्दि-ट करता है । यह विभाजन व-र्ा 2010 से 2012 तक प्रत्येक व-र्ा काडर में प्रतिव-र्ा निपटान का वार्ि-क दर प्रदान करता है । निपटान आंकड़ों के इन वार्ि-क दर का औसत उस काडर के प्रति न्यायाधीश का निपटान औसत दर होता है ।

3. व-र्ा 2010-2012 हेतु न्यायाधीश के प्रत्येक काडर के समक्ष वार्ि-क संस्थापनों का औसत निकाला गया ।[37] वर्तमान फाइलिंग को निपटाने के लिए यह सुनिश्चित करने के लिए

---

[36] यह उल्लेख करना प्रासंगिक है कि **आर. एल. गुप्ता** बनाम **भारत संघ,** ए. आई. आर. 1988 एस. सी. 968 वाले मामले में, उच्चतम न्यायालय ने निदेश दिया था कि दिल्ली अधीनस्थ न्यायपालिका में सभी बकाया मामलों को 2 व-र्ा की अवधि के भीतर निपटाया जाए ।

[37] न्यायिक संसाधनों की भावी मांग का विश्ले-ाण करने के आधार के रूप में पिछले तीन व-र्ाों में वार्ि-क संस्थापन के औसत का उपयोग स्प-टीकरण को प्रभावित करता है । कुछ उच्च न्यायालयों ने पिछले 10 व-र्ा अर्थात् 2002-2012 में संस्थापन, निपटान और विचाराधीनता के आंकड़े हमें उपलब्ध कराए । फिर भी, हमने पिछले तीन व-र्ाों में ही संस्थित मामलों पर विचार करने का विनिश्चय किया । न्यायिक संसाधनों की मांग प्रख्यापित नई विधियाँ विधि की जागरूकता में परिवर्तन, समाज की सामाजिक आर्थिक स्थितियों में परिवर्तन आदि के आधार पर परिवर्तित होती रहती है । हाल ही का आंकड़ा इस बात का बेहतर भवि-य सूचक है कि पिछले आंकड़े की तुलना में, अगली योजना अवधि में न्यायिक संसाधनों की क्या मांग होने वाली है । उदाहरणार्थ, झारखंड की उच्चतर न्यायिक सेवा के आंकड़ों पर यदि विचार करें, तो 2002-2011 का 10 व-र्ा औसतन वार्ि-क संस्थापन यह इंगित करता है कि हम 2012 में

कि नए पिछले ढेर का सृजन न हो, अपेक्षित संख्या निकालने के लिए उस काडर हेतु प्रति न्यायाधीश निपटान के औसत दर द्वारा औसत संस्थापन का विभाजन किया जाता है । इस आंकड़ें को संतुलित संख्या के रूप में वर्णित किया गया है ।

4. संतुलित संख्या से न्यायाधीशों की वर्तमान संख्या को घटाकर यह सुनिश्चित करने के लिए अपेक्षित न्यायाधीशों की अतिरिक्त संख्या हमें प्रदान करता है कि निपटानों की संख्या संस्थापनों की संख्या के बराबर होगी ।

5. न्यायाधीशों के विशि-ट काडर के लिए पिछले ढेर (एक व-र्ा से अधिक समय से न्यायाधीशों के उस काडर के समक्ष लंबित सभी मामलों के रूप में परिभाि-त) को तब उस प्रकार के न्यायाधीश के निपटान द्वारा विभाजित किया गया । यह एक व-र्ा पिछले ढेर की निकासी के किए अपेक्षित न्यायाधीशों की संख्या प्रदान करता है । इस संख्या को 2 से विभाजित करने पर दो व-र्ा में और इसी प्रकार आगे पिछले ढेर की निकासी के लिए अपेक्षित न्यायाधीशों की संख्या का पता चलता है ।

अतः, संतुलन के लिए न्यायाधीशों की अतिरिक्त संख्या अवधारित करने के फार्मूले को इस

21452 नए संस्थापनों की प्रत्याशा कर सकते हैं । वास्तविक संस्थापन 26665 था । अतः, वास्तविक संस्थापन और अनुमानित संस्थापन के बीच अंतर 5213 मामलों का था । दूसरी ओर उसी काडर के लिए 2009-11 की समयावधि के लिए 2012 के वास्तविक संस्थापन 26665 के विरुद्ध 26996 था । अंतर केवल 331 मामलों का था । परिवर्तन इस कारण हुआ क्योंकि उच्चतर न्यायिक सेवा के समक्ष मामलों के वार्-िक संस्थापन में हाल ही के समय में वृद्धि हुई । 10 व-र्ा के औसत आंकड़े ने औसत को कम कर दिया क्योंकि 10 व-र्ा पहले संस्थापन परिवर्तन का यह अर्थ है कि संस्थापन दर पिछले काफी समय से स्थिर नहीं हैं । अतः, सापेक्षतः पुराने आंकड़ों का उपयोग भावीं पूर्वानुमान के लिए अविश्वसनीय उपाय होते हैं । तथापि, अन्य कारकों के अटल रहने पर पिछली मांग निकट भवि-य की योजना के लिए उपयोगी साधन हो सकते हैं । यदि अन्य कारकों में परिवर्तन हुआ उदाहरणार्थ, नई विधियां लागू की गईं या न्यायालय की धनीय अधिकारिता में परिवर्तन हुआ तो अतिरिक्त संसाधनों की अपेक्षा होगी ।

यह उल्लेख करना सुसंगत है कि आंकड़ा एक व-र्ा से दूसरे व-र्ा में फाइलिंग के आकड़ों में भारी उतार-चढ़ाव दर्शित करता है जिससे कि किसी स्प-ट रूझान का पता नहीं चलता है । उदाहरणार्थ, दिल्ली उच्चतर न्यायिक सेवा में, नए मामलों के संस्थापन में व-र्ा 2009 से 2010 तक 18.4%, 2010 से 2011 तक 4.3% और 2011 से 2012 तक 11.3% की वृद्धि हुई । दिल्ली न्यायिक सेवा में 2009 से 2010 तक 4.8%, 2010 से 2011 तक 17% नए मामले संस्थित किए गए किंतु 2012 में 25.2% की गिरावट आई । ऐसे उतार-चढ़ाव का एक अन्य उदाहरण हिमाचल प्रदेश के आंकड़ों में दिखाई पड़ता है । यहां सिविल न्यायाधीश जूनियर डिवीजन के काडर में 2010 में 22.5%, 2011 में 1.2% और 2012 में 35% नए मामले के संस्थापन में वृद्धि हुई । (नीचे सारणी 1 से 10 देखें) । इस कारण के लिए किसी प्रकार का रुझान विश्ले-ाण कठिन है । प्रतिगमन विश्ले-ाण जैसे न्यायिक संसाधनों की मांग का पूर्वानुमान करने वाले अन्य तरीके पूर्वनिश्चित जैसे न्यायिक संसाधनों की मांग का पूर्वानुमान करने वाले अन्य तरीके पूर्व निश्चित हुए हैं क्योंकि स्वतंत्र, परिवर्तनीय बातें जो नई विधियों के प्रवृत्त होने, विधियों के बारे में जागरूकता बढ़ने और सामाजिक और आर्थिक संदर्भ की तरह फाइलिंग की संख्या को प्रभावित करते हैं, का पूर्वानुमान लगाना, मापना और परिभाि-त करना कठिन है ।

औसत संस्थापन अगले कुछ व-र्ों में संभवतः होने वाले मामलों का आसन्न माप है । इसे अकेले मापदंड नहीं माना जाना चाहिए किंतु यह सुनिश्चित करने के लिए सतत् मानीटर किया जाना चाहिए कि वार्-िक संस्थापनों में वृद्धि की पराका-ठा न्यायाधीशों की अतिरिक्त भर्ती से होती है । हमने पिछले तीन व-र्ा अर्थात् 2010-12 के आंकड़ों का उपयोग किया है क्योंकि हमारे पास न्यायालयों की अधिकतम संख्या का इस अवधि का सर्वाधिक व्यापक आंकड़ा उपलब्ध है ।

प्रकार व्यक्त किया गया है :

एआरडी = [(डी2010/जे2010)+(डी2011/जे2011
(डी2012/जे2012)]
बीईजे = (एआई/एआरडी)-जे

जहां,

बीईजे = संतुलन के लिए अपेक्षित न्यायाधीशों की अतिरिक्त संख्या

एआई = औसत संस्थापन

एआरडी = औसत निपटान दर

डी2010,डी2011,डी2012 = उस व-र् की न्यायाधीशों की वार्-िक कार्यरत संख्या

जे2010,जे2011,जे2012 = उस व-र् हेतु न्यायाधीशों की वार्-िक संख्या

जे = न्यायाधीशों की वर्तमान कार्यरत संख्या

नियत समयावधि के भीतर लंबित मामलों के निपटान के लिए अपेक्षित **पिछले ढेर के निपटान के लिए न्यायाधीशों की संख्या** के अवधारण का फार्मूला है :

एजेबीके = (बी/एआरडी)/टी

जहां,

एजेबीके = पिछले ढेर के निपटान के लिए न्यायाधीशों की संख्या

बी = एक व-र् से अधिक समय से लंबित मामलों की संख्या के रूप में परिभाि-नत पिछला ढेर ।

टी = व-र्ों की संख्या में समय ढांचा जिसके भीतर पिछले ढेर के निकासी की आवश्यकता है ।

इन फार्मूले के उपयोग के आधार पर निम्नलिखित सारणियां बनाई गई थीं । ये सारणियां संतुलन के लिए अपेक्षित अधीनस्थ न्यायालय, न्यायाधीशों की अतिरिक्त संख्या और आंध्र प्रदेश, बिहार, दिल्ली, गुजरात, हिमाचल प्रदेश, जम्मू और कश्मीर, झारखंड, कर्नाटक, केरल, पंजाब और हरियाणा, सिक्किम और उत्तराखंड के उच्च न्यायालयों के विद्यमान पिछले ढेर की निकासी के लिए अपेक्षित अधीनस्थ न्यायालय न्यायाधीशों की संख्या को उपदर्शित करती हैं ।

दृ-टांत

तरीके को उदाहरण द्वारा आसानी से स्प-ट किया जा सकता है । सारणी-। आंध्र प्रदेश अधीनस्थ न्यायालयों के निपटान दर का विश्ले-ण दर्शित करती है । इस आंकड़े के अनुसार व-र्ा 2010 में आंध्र प्रदेश के उच्चतर न्यायिक सेवा में 129 न्यायाधीश थे जिन्होंने 109085 मामलों का निपटान किया, जिसका औसत 109085/129 = 845.6 मामला प्रति न्यायाधीश था । इसी प्रकार व-र्ा 2011 में, 139 न्यायाधीशों ने 111892 मामले निपटाए जिसका औसत 111892/139 = 805 मामला प्रति न्यायाधीश ; और 2012 में, 136 न्यायाधीशों ने 106997 मामले निपटाए जिसका औसत 106997/136 = 786.7 मामला प्रति न्यायाधीश था । अतः, औसत उच्चतर न्यायिक सेवा के न्यायाधीशों ने (845.6+805+786.7)/3 = 812.4 मामले इस समयावधि में प्रति व-र्ा प्रति न्यायाधीश निपटाए । यह प्रति न्यायाधीश निपटान का औसत दर है ।

अब उच्चतर न्यायिक सेवा काडर में व-र्ा 2010-2012 तक प्रति व-र्ा औसत संस्थापन (112209+112710+113250)/3 = 112723 है । यदि प्रत्येक न्यायाधीश प्रति व-र्ा औसतन 812.4 मामलों का निपटान कर रहा है तो 112723 मामलों के निपटान के लिए अपेक्षित न्यायाधीशों की संख्या 112723/812.4 = 138.7 है । यह संतुलन संख्या है जिसका यह अभिप्राय है कि यदि उच्चतर न्यायिक सेवा न्यायाधीशों की संख्या 138.7 थी तो उस समयावधि में सभी नए संस्थित मामलों का निपटान पिछला ढेर जोड़े बिना किया जाएगा । चूंकि इस समय इस काडर में 136 न्यायाधीश 138.7 - 136 = 3 (उच्चतर संख्या को पूर्णांक बनाकर) अतिरिक्त न्यायाधीशों की आवश्यकता है । संतुलन संख्या वर्तमान संस्थापनों के संबंध में है ।

मामलों का काफी पिछला ढेर भी है । उच्चतर न्यायिक सेवा के मामले में 31.12.2012 को, एक व-र्ा से अधिक समय से 98072 मामले लंबित हैं । यदि एक न्यायाधीश औसतन प्रतिव-र्ा 812.4 मामलों का निपटान करता है तो प्रणाली को एक व-र्ा में सभी लंबित मामलों का निपटान करने के लिए 98072/812.4 = 121 न्यायाधीशों या क्रमशः 2 और 3 व-र्ाों में सभी मामलों के निपटान के लिए 121/2 = 61 (पूर्णांक के पश्चात्), या 121/3 = 41 (पूर्णांक के पश्चात्) न्यायाधीश की आवश्यकता होगी ।

निम्नलिखित सारणी 12 उच्च न्यायालयों द्वारा दिए गए संस्थापन, निपटान और विचाराधीनता के आंकड़ों पर निपटान दर रीति को लागू होती है ।

सारणी I : आंध्र प्रदेश अधीनस्थ न्यायालय											
	2010	2011	2012	औसत संस्थापन	प्रति न्यायाधीश निपटान का औसत दर	संतुलन संख्या	संतुलन के लिए अपेक्षित न्यायाधीशों की अतिरिक्त संख्या	31.12.2012 को 1 वर्ष से कम समय से लंबित मामलों की संख्या	निम्न वर्ष में पिछले ढेर की निकासी के लिए अपेक्षित न्यायाधीशों की संख्या		
									1 वर्ष	2 वर्ष	3 वर्ष
उच्चतर न्यायिक सेवा											
संस्थापन	112137	112636	113167	112646.7	811.7	138.8	3	98072	121	61	41
निपटान	108972	111791	106924								
न्यायाधीशों की सं.	129	139	136								
आरओडी	844.7	804.3	786.2								
अधीनस्थ न्यायिक सेवा											
संस्थापन	345210	340657	338610	341492.3	592.1	576.7	-20	472656	799	400	267
निपटान	355249	357403	356698								
न्यायाधीशों की सं.	600	609	597								
आरओडी	592.1	586.9	597.5								

सारणी II : बिहार अधीनस्थ न्यायालय											
	2010	2011	2012	औसत संस्थापन	प्रति न्यायाधीश निपटान का औसत दर	संतुलन संख्या	संतुलन के लिए अपेक्षित न्यायाधीशों की अतिरिक्त संख्या	31.12.2012 को 1 वर्ष से कम समय से लंबित मामलों की संख्या	निम्न वर्ष में पिछले ढेर की निकासी के लिए अपेक्षित न्यायाधीशों की संख्या		
									1 वर्ष	2 वर्ष	3 वर्ष
उच्चतर न्यायिक सेवा											
संस्थापन	67839	63367	71569	67591.7	199.2	339.3	**50**	184746	**928**	**464**	**310**
निपटान	73613	60378	59961								
न्यायाधीशों की सं.	356	328	290								
आरओडी	206.8	184.1	206.8								
अधीनस्थ न्यायिक सेवा											
संस्थापन	158113	158498	183773	166794.7	213.2	782.2	**164**	1038598	**4871**	**2436**	**1624**
निपटान	137583	125927	133575								
न्यायाधीशों की सं.	624	619	619								
आरओडी	220.5	203.4	215.8								

सारणी III : दिल्ली अधीनस्थ न्यायालय											
	2010	2011	2012	औसत संस्थापन	प्रति न्यायाधीश निपटान का औसत दर	संतुलन संख्या	संतुलन के लिए अपेक्षित न्यायाधीशों की अतिरिक्त संख्या	31.12.2012 को 1 वर्ष से कम समय से लंबित मामलों की संख्या	निम्न वर्ष में पिछले ढेर की निकासी के लिए अपेक्षित न्यायाधीशों की संख्या		
									1 वर्ष	2 वर्ष	3 वर्ष
उच्चतर न्यायिक सेवा											
संस्थापन	69631	72609	73883	72041.0	446.8	161.2	-10	45669	103	52	35
निपटान	77850	71949	71073								
न्यायाधीशों की सं.	165	158	172								
आरओडी	471.8	455.4	413.2								
दिल्ली न्यायिक सेवा											
संस्थापन	133655	129171	161981	141602.3	1115.9	126.9	-130	231452	208	104	70
निपटान	273922	301447	271171								
न्यायाधीशों की सं.	226	279	257								
आरओडी	1212.0	1080.5	1055.1								

सारणी IV : गुजरात अधीनस्थ न्यायालय											
	2010	2011	2012	औसत संस्थापन	प्रति न्यायाधीश निपटान का औसत दर	संतुलन संख्या	संतुलन के लिए अपेक्षित न्यायाधीशों की अतिरिक्त संख्या	31.12.2012 को 1 वर्ष से कम समय से लंबित मामलों की संख्या	निम्न वर्ष में पिछले ढेर की निकासी के लिए अपेक्षित न्यायाधीशों की संख्या		
									1 वर्ष	2 वर्ष	3 वर्ष
उच्चतर न्यायिक सेवा											
संस्थापन	152663	149947	152041	151550.3	1053.1	143.9	-31	267853	255	1282	85
निपटान	161848	155290	169598								
न्यायाधीशों की सं.	141	149	175								
आरओडी	1147.9	1042.2	969.1								
अधीनस्थ न्यायिक सेवा											
संस्थापन	530434	367726	366585	421581.7	609.1	692.1	-166	1122354	1843	922	615
निपटान	541640	385527	384200								
न्यायाधीशों की सं.	671	673	859								
आरओडी	807.2	572.8	447.3								

सारणी V : हिमाचल प्रदेश अधीनस्थ न्यायालय											
	2010	2011	2012	औसत संस्थापन	प्रति न्यायाधीश निपटान का औसत दर	संतुलन संख्या	संतुलन के लिए अपेक्षित न्यायाधीशों की अतिरिक्त संख्या	31.12.2012 को 1 वर्ष से कम समय से लंबित मामलों की संख्या	निम्न वर्ष में पिछले ढेर की निकासी के लिए अपेक्षित न्यायाधीशों की संख्या		
									1 वर्ष	2 वर्ष	3 वर्ष
उच्चतर न्यायिक सेवा											
संस्थापन	30789	30591	32912	31430.7	1291.6	24.3	0	11477	9	5	3
निपटान	29913	29829	31815								
न्यायाधीशों की सं.	24	22	25								
आरओडी	1246.4	1355.9	1272.6								
अधीनस्थ न्यायिक सेवा											
संस्थापन	92379	99456	171699	121178.0	1339.0	90.5	16	85307	64	32	22
निपटान	84246	95473	125235								
न्यायाधीशों की सं.	75	78	75								
आरओडी	1123.3	1224.0	1669.8								

सारणी VI : जम्मू और कश्मीर न्यायिक सेवा											
									निम्न वर्ग में पिछले ढेर की निकासी के लिए अपेक्षित न्यायाधीशों की संख्या		
	2010	2011	2012	औसत संस्थापन	प्रति न्यायाधीश निपटान का औसत दर	संतुलन संख्या	संतुलन के लिए अपेक्षित न्यायाधीशों की अतिरिक्त संख्या	31.12.2012 को 1 वर्ष से कम समय से लंबित मामलों की संख्या	1 वर्ष	2 वर्ष	3 वर्ष
उच्चतर न्यायिक सेवा											
संस्थापन	38675	53642	25327	39214.7	757.9	51.7	2	25152	34	17	12
निपटान	36275	49275	25994								
न्यायाधीशों की सं.	45	52	50								
आरओडी	806.1	947.6	519.9								
अधीनस्थ न्यायिक सेवा											
संस्थापन	130290	150082	160276	146882.7	1246.9	117.8	-4	83431	67	34	23
निपटान	123008	137873	167278								
न्यायाधीशों की सं.	100	121	122								
आरओडी	1230.1	1139.4	1371.1								

सारणी VII : झारखंड अधीनस्थ न्यायालय											
	2010	2011	2012	औसत संस्थापन	प्रति न्यायाधीश निपटान का औसत दर	संतुलन संख्या	संतुलन के लिए अपेक्षित न्यायाधीशों की अतिरिक्त संख्या	31.12.2012 को 1 वर्ष से कम समय से लंबित मामलों की संख्या	निम्न वर्ष में पिछले ढेर की निकासी के लिए अपेक्षित न्यायाधीशों की संख्या		
									1 वर्ष	2 वर्ष	3 वर्ष
उच्चतर न्यायिक सेवा											
संस्थापन	24372	29416	26363	26717.0	211.0	126.7	**17**	40603	**193**	**97**	**65**
निपटान	17755	17740	18072								
न्यायाधीशों की सं.	63	95	110								
आरओडी	281.8	186.7	164.3								
अधीनस्थ न्यायिक सेवा											
संस्थापन	88001	85485	90166	87884.0	328.2	267.8	**7**	187939	**573**	**287**	**191**
निपटान	75682	92130	101473								
न्यायाधीशों की सं.	266	296	261								
आरओडी	284.5	311.3	388.8								

सारणी VIII : कर्नाटक अधीनस्थ न्यायालय											
									निम्न वर्ष में पिछले ढेर की निकासी के लिए अपेक्षित न्यायाधीशों की संख्या		
	2010	2011	2012	औसत संस्थापन	प्रति न्यायाधीश निपटान का औसत दर	संतुलन संख्या	संतुलन के लिए अपेक्षित न्यायाधीशों की अतिरिक्त संख्या	31.12.2012 को 1 वर्ष से कम समय से लंबित मामलों की संख्या	1 वर्ष	2 वर्ष	3 वर्ष
उच्चतर न्यायिक सेवा											
संस्थापन	139780	141359	142910	141349.7	669.7	211.1	**22**	98970	**148**	**74**	**50**
निपटान	140325	143195	136334								
न्यायाधीशों की सं.	217	222	190								
आरओडी	646.7	645.0	717.5								
अधीनस्थ न्यायिक सेवा											
संस्थापन	513755	528117	593277	545049.7	998.8	545.7	**30**	657058	**658**	**329**	**220**
निपटान	500509	489463	562940								
न्यायाधीशों की सं.	522	517	516								
आरओडी	958.8	946.7	1091.0								

सारणी IX : केरल अधीनस्थ न्यायालय											
	2010	2011	2012	औसत संस्थापन	प्रति न्यायाधीश निपटान का औसत दर	संतुलन संख्या	संतुलन के लिए अपेक्षित न्यायाधीशों की अतिरिक्त संख्या	31.12.2012 को 1 वर्ष से कम समय से लंबित मामलों की संख्या	निम्न वर्ष में पिछले ढेर की निकासी के लिए अपेक्षित न्यायाधीशों की संख्या		
									1 वर्ष	2 वर्ष	3 वर्ष
उच्चतर न्यायिक सेवा											
संस्थापन	136551	149246	156335	147377.3	1215.0	121.3	-6	152175	126	63	42
निपटान	138189	140916	145905								
न्यायाधीशों की सं.	114	109	128								
आरओडी	1212.2	1292.8	1139.9								
अधीनस्थ न्यायिक सेवा											
संस्थापन	774244	678137	842578	764986.3	2696.0	283.7	25	459911	171	86	57
निपटान	786216	648392	695006								
न्यायाधीशों की सं.	271	259	259								
आरओडी	2901.2	2503.4	2683.4								

सारणी X : पंजाब अधीनस्थ न्यायालय											
	2010	2011	2012	औसत संस्थापन	प्रति न्यायाधीश निपटान का औसत दर	संतुलन संख्या	संतुलन के लिए अपेक्षित न्यायाधीशों की अतिरिक्त संख्या	31.12.2012 को 1 वर्ष से कम समय से लंबित मामलों की संख्या	निम्न वर्ग में पिछले ढेर की निकासी के लिए अपेक्षित न्यायाधीशों की संख्या		
									1 वर्ष	2 वर्ष	3 वर्ष
उच्चतर न्यायिक सेवा											
संस्थापन	70232	82091	124820	92381.0	937.4	98.6	**6**	43769	**47**	**24**	**16**
निपटान	62651	82398	117148								
न्यायाधीशों की सं.	87	99	93								
आरओडी	720.1	832.3	1259.7								
अधीनस्थ न्यायिक सेवा											
संस्थापन	228420	314076	281114	274536.7	1097.9	250.1	**-71**	252973	**231**	**116**	**77**
निपटान	236408	337256	303011								
न्यायाधीशों की सं.	217	267	322								
आरओडी	1089.4	1263.1	941.0								
हरियाणा अधीनस्थ न्यायालय											
उच्चतर न्यायिक सेवा											
संस्थापन	98499	117315	94335	103383.0	964.2	107.2	**-2**	54041	**56**	**28**	**19**
निपटान	86136	102806	85270								
न्यायाधीशों की सं.	98	83	110								
आरओडी	878.9	1238.6	775.2								
अधीनस्थ न्यायिक सेवा											
संस्थापन	182591	241851	393333	272591.7	1179.1	231.2	**-56**	252736	**215**	**108**	**72**
निपटान	193941	258395	396988								
न्यायाधीशों की सं.	173	249	288								

आरओडी	1121.0	1037.7	1378.4								
चंडीगढ़ अधीनस्थ न्यायालय											
उच्चतर न्यायिक सेवा											
संस्थापन	5162	6131	6569	5954.0	992.1	6.0	1	4646	5	3	2
निपटान	4363	6293	7202								
न्यायाधीशों की सं.	6	6	6								
आरओडी	727.2	1048.8	1200.3								
अधीनस्थ न्यायिक सेवा											
संस्थापन	21027	67805	39220	42684.0	3952.0	10.8	-3	23923	7	3	2
निपटान	32482	86792	46710								
न्यायाधीशों की सं.	14	14	14								
आरओडी	2320.1	6199.4	3336.4								

सारणी XI : सिक्किम अधीनस्थ न्यायालय											
	2010	2011	2012	औसत संस्थापन	प्रति न्यायाधीश निपटान का औसत दर	संतुलन संख्या	संतुलन के लिए अपेक्षित न्यायाधीशों की अतिरिक्त संख्या	31.12.2012 को 1 वर्ष से कम समय से लंबित मामलों की संख्या	निम्न वर्ष में पिछले ढेर की निकासी के लिए अपेक्षित न्यायाधीशों की संख्या		
									1 वर्ष	2 वर्ष	3 वर्ष
उच्चतर न्यायिक सेवा											
संस्थापन	1643	1670	1459	1590.7	304.8	5.2	**2**	243	**1**	**1**	**1**
निपटान	1551	1565	1580								
न्यायाधीशों की सं.	6	6	4								
आरओडी	258.5	260.8	395.0								
अधीनस्थ न्यायिक सेवा											
संस्थापन	1583	1832	1867	1760.7	475.1	3.7	**-2**	216	**1**	**1**	**1**
निपटान	1540	1808	1855								
न्यायाधीशों की सं.	3	3	6								

आरओडी	513.3	602.7	309.2									

सारणी XII : उत्तराखंड अधीनस्थ न्यायालय											
	2010	2011	2012	औसत संस्थापन	प्रति न्यायाधीश निपटान का औसत दर	संतुलन संख्या	संतुलन के लिए अपेक्षित न्यायाधीशों की अतिरिक्त संख्या	31.12.2012 को 1 वर्ष से कम समय से लंबित मामलों की संख्या	निम्न वर्ग में पिछले ढेर की निकासी के लिए अपेक्षित न्यायाधीशों की संख्या		
									1 वर्ष	2 वर्ष	3 वर्ष
उच्चतर न्यायिक सेवा											
संस्थापन	26416	22755	23949	24373.3	675.1	36.1	-5	14061	21	11	7
निपटान	28422	24843	23444								
न्यायाधीशों की सं.	33	41	42								
आरओडी	861.3	605.9	558.2								
अधीनस्थ न्यायिक सेवा											
संस्थापन	150241	103904	115272	123139.0	1118.8	110.1	3	87419	79	40	26
निपटान	109115	107590	113439								
न्यायाधीशों की सं.	96	92	108								

आरओडी	1136.6	1169.5	1050.4									

पूर्वगामी के आलोक में इन उच्च न्यायालयों द्वारा नियुक्त किए गए अतिरिक्त अधीनस्थ न्यायालय न्यायाधीशों की संख्या इस प्रकार है :

सारणी XIII : अपेक्षित अतिरिक्त न्यायाधीशें की संख्या

	संतुलन के लिए अतिरिक्त न्यायाधीशों की संख्या	निम्न वर्ग में पिछले ढेर की निकासी के लिए न्यायाधीशों की संख्या			रिक्तिया (दिसंबर,12)	अनुमोदित संख्या (दिसंबर,12)	अपेक्षित न्यायाधीशों की संख्या
		1 वर्ष	2 वर्ष	3 वर्ष			
आंध्र प्रदेश अधीनस्थ न्यायालय							
उच्चतर न्यायिक सेवा	3	121	61	41	43	179	उच्चतर न्यायिक सेवा में 44 से 124 अतिरिक्त न्यायाधीश और अधीनस्थ न्यायिक सेवा में 247 से 779 न्यायाधीशों की आवश्यकता ।
अधीनस्थ न्यायिक सेवा	-20	799	400	267	64	661	
बिहार अधीनस्थ न्यायालय							
उच्चतर न्यायिक सेवा	50	928	464	310	201	503	उच्चतर न्यायिक सेवा में 360 से 978 अतिरिक्त न्यायाधीश और अधीनस्थ न्यायिक सेवा में 1788 से 5035 न्यायाधीशों की आवश्यकता ।
अधीनस्थ न्यायिक सेवा	164	4871	2436	1624	356	984	
दिल्ली अधीनस्थ न्यायालय							
उच्चतर न्यायिक सेवा	-10	103	52	35	31	226	उच्चतर न्यायिक सेवा में 25 से 93 अतिरिक्त न्यायाधीश और अधीनस्थ न्यायिक सेवा में 0 से 78 न्यायाधीशों की आवश्यकता ।
अधीनस्थ न्यायिक सेवा	-130	208	104	70	115	382	
गुजरात अधीनस्थ न्यायालय							
उच्चतर न्यायिक सेवा	-31	255	1282	85	137	312	उच्चतर न्यायिक सेवा में 54 से 224 अतिरिक्त न्यायाधीश और अधीनस्थ न्यायिक सेवा में 449 से 1677 न्यायाधीशों की आवश्यकता ।
अधीनस्थ न्यायिक सेवा	-166	1843	922	615	492	1351	

हिमाचल प्रदेश अधीनस्थ न्यायालय							
उच्चतर न्यायिक सेवा	0	9	5	3	3	43	उच्चतर न्यायिक सेवा में 3 से 9 अतिरिक्त न्यायाधीश और अधीनस्थ न्यायिक सेवा में 38 से 88 न्यायाधीशों की आवश्यकता ।
अधीनस्थ न्यायिक सेवा	16	64	32	22	11	89	
जम्मू एवं कश्मीर अधीनस्थ न्यायालय							
उच्चतर न्यायिक सेवा	2	34	17	12	11	67	उच्चतर न्यायिक सेवा में 14 से 36 अतिरिक्त न्यायाधीश और अधीनस्थ न्यायिक सेवा में 19 से 63 न्यायाधीशों की आवश्यकता ।
अधीनस्थ न्यायिक सेवा	-4	67	34	23	11	139	
झारखंड अधीनस्थ न्यायालय							
उच्चतर न्यायिक सेवा	17	193	97	65	47	174	उच्चतर न्यायिक सेवा में 82 से 210 अतिरिक्त न्यायाधीश और अधीनस्थ न्यायिक सेवा में 198 से 580 न्यायाधीशों की आवश्यकता ।
अधीनस्थ न्यायिक सेवा	7	573	287	191	58	329	
कर्नाटक अधीनस्थ न्यायालय							
उच्चतर न्यायिक सेवा	22	148	74	50	119	332	उच्चतर न्यायिक सेवा में 72 से 170 अतिरिक्त न्यायाधीश और अधीनस्थ न्यायिक सेवा में 250 से 688 न्यायाधीशों की आवश्यकता ।
अधीनस्थ न्यायिक सेवा	30	658	329	220	220	754	
केरल अधीनस्थ न्यायालय							
उच्चतर न्यायिक सेवा	-6	126	63	42	6	134	उच्चतर न्यायिक सेवा में 36 से 120 अतिरिक्त न्यायाधीश और अधीनस्थ न्यायिक सेवा में 82 से 196 न्यायाधीशों की आवश्यकता ।
अधीनस्थ न्यायिक सेवा	25	171	86	57	22	281	

पंजाब अधीनस्थ न्यायालय							
उच्चतर न्यायिक सेवा	6	47	24	16	28	128	उच्चतर न्यायिक सेवा में 22 से 53 अतिरिक्त न्यायाधीश और अधीनस्थ न्यायिक सेवा में 6 से 160 न्यायाधीशों की आवश्यकता ।
अधीनस्थ न्यायिक सेवा	-71	231	116	77	57	403	
हरियाणा प्रदेश अधीनस्थ न्यायालय							
उच्चतर न्यायिक सेवा	-2	56	28	19	21	153	उच्चतर न्यायिक सेवा में 17 से 54 अतिरिक्त न्यायाधीश और अधीनस्थ न्यायिक सेवा में 16 से 159 न्यायाधीशों की आवश्यकता ।
अधीनस्थ न्यायिक सेवा	-56	215	108	72	70	375	
चंडीगढ़ अधीनस्थ न्यायालय							
उच्चतर न्यायिक सेवा	1	5	3	2	0	6	उच्चतर न्यायिक सेवा में 3 से 6 अतिरिक्त न्यायाधीश और अधीनस्थ न्यायिक सेवा में 0 से 4 न्यायाधीशों की आवश्यकता ।
अधीनस्थ न्यायिक सेवा	-3	7	3	2	0	14	
सिक्किम अधीनस्थ न्यायालय							
उच्चतर न्यायिक सेवा	2	1	1	1	5	9	उच्चतर न्यायिक सेवा में 3 अतिरिक्त न्याधीशों और अधीनस्थ न्यायिक सेवा में 0 न्यायाधीशों की आवश्यकता ।
अधीनस्थ न्यायिक सेवा	-2	1	1	1	2	8	
उत्तराखंड अधीनस्थ न्यायालय							
उच्चतर न्यायिक सेवा	-5	21	11	7	9	51	उच्चतर न्यायिक सेवा में 2 से 16 अतिरिक्त न्यायाधीश और अधीनस्थ न्यायिक सेवा में 29 से 82 न्यायाधीशों की आवश्यकता ।
अधीनस्थ न्यायिक सेवा	3	79	40	26	62	170	

यथा विमर्शित आंकड़ों का पूर्वगामी विश्ले-ण और विभिन्न तरीकों के मूल्यांकन का गहन विचार जो आयोग निम्नलिखित पर बल देने के लिए महत्वपूर्ण समझता है :

1. पूर्विकता आधार पर न्यायाधीशों की नियुक्ति : जैसा यह आंकड़ा उपदर्शित करता है, स्थिति वस्तुतः भयावह है और हर क्षण खराब होती जा रही है । सभी राज्यों में, ऐसे मामलों का काफी पिछला ढेर है जिसके लिए काफी न्यायिक संसाधनों के अंतरागम की अपेक्षा है चाहे एक राज्य को पिछले ढेर की निकासी के लिए 3 व-र्ा की समय-सीमा लगे । उदाहरणार्थ, बिहार को तीन व-र्ाों में पिछले ढेर की निकासी के लिए 1624 अतिरिक्त न्यायाधीशों की अपेक्षा है । पिछले ढेर की समस्या का समाधान इस तथ्य द्वारा होता है कि कुछ राज्यों में, न्यायालय नई फाइलिंग का समयानुकूल निपटान करने में ही असमर्थ है और इस प्रकार पहले से ही हुए भारी पिछले ढेर बढ़ते जाते हैं । दर्शाए गए आंकड़े के अनुसार, जहां न्यायालय संतुलन बिगाड़ रहे हैं वहां व्यवस्था बुरी तरह से पिछले ढेर से ग्रस्त है और शीघ्र हस्तक्षेप की अपेक्षा है ।[38] पिछले ढेर को समाप्त करने के लिए अपेक्षित न्यायाधीशों की भारी संख्या और चयन तथा प्रशिक्षण कार्यक्रम पूरा करने में लगने वाले समय पर ध्यान देते हुए, विधि आयोग की यह सिफारिश है कि तीन व-र्ा की समय-सीमा में पिछले ढेर का निपटान करने और संतुलन के लिए अपेक्षित न्यायाधीशों की संख्या पर पूर्विकतानुसार नए न्यायाधीशों की भर्ती पर फोकस किया जाना चाहिए । इस पर पूर्विकता आधार पर विचार किया जाना चाहिए अन्यथा पहले से ही व्याप्त पिछले ढेर की कठिन समस्या और असाध्य हो जाएगी ।

2. विशे-न यातायात न्यायालय : संस्थापन और निपटान के आंकड़ों में यातायात चालान/पुलिस चालान सम्मिलित नहीं हैं । उपरोक्त भाग 3क में यथावर्णित, विधि आयोग की यह सिफारिश है कि इन मामलों का विचार विशे-न न्यायालय, कुल मिलाकर नियमित न्यायालयों द्वारा किया जाए । विशे-न न्यायालय प्रातःकालीन और सायंकालीन पारी में कार्य कर सकते हैं । इन न्यायालयों के अधिकतर कार्य में बहुत कम न्यायिक उलझन की अपेक्षा की संभावना है । अतः हाल ही के विधि स्नातकों की नियुक्ति इन न्यायालयों की अध्यक्षता के लिए थोड़ी अवधि अर्थात् तीन व-र्ा के लिए की जा सकती है। जुर्माने के संदाय के लिए आन लाइन सुविधा उपलब्ध कराकर या इस प्रयोजन के लिए न्यायालय परिसर में अलग काउंटर सुविधा उपलब्ध कराकर इन न्यायालयों का कार्यभार काफी हद तक कम किया जा सकता है । ऋजु प्रक्रिया सुनिश्चित करने के लिए, विशे-न यातायात न्यायालयों को केवल ऐसे मामलों पर विचार करना चाहिए जिसमें जुर्माना अंतर्वि-ट हो । जहां परिणाम के रूप में कारावास की संभावना हो वहां मामले की सुनवाई नियमित न्यायालय द्वारा की जानी चाहिए । हाल ही के विधि स्नातकों को ऐसे न्यायालयों में तैनात करने से ऐसे स्नातकों को वकालत या न्यायिक सेवा में जीवन-वृत्ति के लिए एक सार्थक प्रोन्नयन सीढ़ी उपलब्ध कराने का अतिरिक्त फायदा भी होगा । यह उल्लेखनीय है कि पिछला ढेर आंकड़ों में यातायात चालान अपवर्जित नहीं है । ऐसा आंकड़ा कि किस अनुपात में यातायात/पुलिस चालान एक व-र्ा से अधिक समय से लंबित है उपलब्ध नहीं थे । तथापि, उन मामलों में सामान्यतः अधिक न्यायिक उलझन की अपेक्षा नहीं

---

[38] जहां संतुलन के लिए अपेक्षित न्यायाधीशों की अतिरिक्त संख्या नकारात्मक है वहां इसकी यह विवक्षा है कि ऐसे न्यायालयों में निपटान संस्थापन से अधिक है । इन मामलों में संतुलन संख्या से अधिक न्यायाधीशों की तैनाती पिछले ढेर का निपटान करने के लिए की जा सकती है । पिछले ढेर के निपटान के लिए अपेक्षित अतिरिक्त न्यायाधीशों की संख्या को आनुपातिकतः घटाया जाए ।

होती, अतः इन अधिकांश मामलों का पिछला ढेर होने की संभावना नहीं है ।

4. न्यायपालिका के सावधिक निर्धारण की आवश्यकता : यह कार्य 2010-12 की कालावधि के संस्थापन, निपटान और विचाराधीनता आंकड़ों के विश्ले-ण पर आधारित है । संस्थापन और निपटान रुझान समय-समय पर परिवर्तित हो सकते हैं और ऐसा होंगे । नई विधियां, अधिकारों की अधिक जागरूकता, परिवर्तित सामाजिक परिस्थितियां और न्यायिक बिलंब की कमी से भी संबंधित रखने वाले मामलों की संख्या में वृद्धि होने की संभावना है । वहीं, बेहतर अवसंरचना, अधिक सहायक स्टाफ, समय बचत तकनीक की पहुंच और बेहतर प्रशिक्षण से न्यायाधीशों के दक्षता स्तर (अतः, निपटान की दर) में वृद्धि होने की संभावना है । क्योंकि न्यायाधीशों की अतिरिक्त संख्या के परिकलन का तरीका इन आंकड़ों पर आधारित है, अतः विधि आयोग यह सिफारिश करता है कि न्यायपालिका की विकसित आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए उच्च न्यायालयों द्वारा संस्थापन और निपटान के रूझान का सतत् मानीटरिंग किया जाना चाहिए । उपरोक्त उपलब्ध कराए गए फार्मूला का उपयोग कर न्यायाधीश की संख्या में सावधिकतः वृद्धि की जानी चाहिए, विशे-कर जब संस्थापन दर निपटान दर से अधिक होना आरंभ हो । आयोग यह भी सिफारिश करता है कि इस विश्ले-ण में लगे रहने के लिए उच्च न्यायालयों को विश्वसनीय और नियमित आंकड़ा संग्रहण और प्रबंध प्रणाली बनाए रखना चाहिए ।

5. न्यायिक संसाधनों की दक्ष तैनाती : आयोग यह मान्यता प्रदान करता है कि न्यायाधीशों की संख्या बढ़ाने के अलावा, अतिरिक्त न्यायिक संसाधनों की दक्ष तैनाती की भी आवश्यकता है । जहां निपटान दर के तरीके से यह उपदर्शित होता है कि कितने अतिरिक्त न्यायाधीशों की अपेक्षा है वहीं यह उपदर्शित नहीं करता कि कैसे विलंब की कमी के लक्ष्य को बेहतर तरीके से पूरा करने के लिए इन अतिरिक्त न्यायिक संसाधनों का आबंटन (अर्थात् किस न्यायालय, किस जिले, किस तरह के मामलों के लिए) किया जाए ।

आगे, आयोग यह भी मान्यता प्रदान करता है कि संसाधनों का सर्वाधिक दक्ष आबंटन विभिन्न स्थानीय कारकों और सूक्ष्म स्तर विश्ले-णों पर निर्भर करता है जिसके लिए पैन-इंडिया सिफारिशें अनुचित हो सकती हैं । अतः, विधि आयोग यह सिफारिश करता है कि एक बार नियुक्ति हो जाने पर उच्च न्यायालय को निम्नलिखित कारकों पर ध्यान रखते हुए, न्यायिक कार्य का समुचित आबंटन करना चाहिए :

क. इस रिपोर्ट में एक व-र्ा से कम अवधि के लंबित सभी मामलों को वर्तमान मामला माना गया है । एक व-र्ा से अधिक से लंबित सभी मामलों को पिछले ढेर वाले मामलों के रूप में वर्गीकृत किया गया है । आयोग यह मान्यता प्रदान करता है कि यह विभाजन तदर्थ है । तथापि, जैसाकि इस रिपोर्ट में पहले ही स्प-ट किया गया है, हमारे पास यह अवधारण करने के लिए कोई स्थापित पैमाना नहीं है कि कब किसी मामले को पिछले ढेर प्रवर्ग में केवल विलंबित मामलों की गणना के प्रयोजन के लिए विलंबित माना जा सके । इस जानकारी के अभाव में एक व-र्ा की समय-सीमा को वर्तमान या पिछले ढेर के रूप में किसी मामले को मानने की अवधि के रूप में लिया गया है । यह संभव है कि पिछले ढेर मामलों के अधिक विचाराधीनता वाले न्यायालय में अधिक मामले हाल ही में फाइल किए गए लंबित हों जबकि

सापेक्षतः कम पिछले ढेर वाले दूसरे न्यायालय में लंबित मामलों का अधिक अनुपात बहुत पुराने मामलों का हो । अतः, उच्च न्यायालयों को सापेक्षतः नए मामलों के भार वाले न्यायालयों के बजाए अधिक पुराने लंबित मामलों वाले न्यायालयों के लिए अधिक संसाधन आबंटित करना चाहिए ।

ख. यह भी उल्लेख करना महत्वपूर्ण है कि सभी प्रकार के मामलों में एक ही समान न्यायिक समय या संसाधनों की अपेक्षा नहीं होती है । छोटे मामले को विलंबित समझा जाएगा यदि इसमें तीन मास से अधिक समय लगता है जबकि हत्या के मामले को उचित समय में निपटाया गया समझा जाएगा यदि उसके निपटाने में 6 मास का समय लगता है । आयोग ने एक, दो और तीन व-र्ा की समय-सीमा नियत की है जिसके भीतर लंबित मामलों को निपटाया जाना चाहिए । तथापि, एक व-र्ा का समय कुछ मामलों के लिए बहुत अधिक और अन्य मामलों के लिए बहुत कम हो सकता है । वि-नय क्षेत्र द्वारा मामलों में विलंब और अपेक्षित कालवार ब्यौरा अवधारित करने का निर्देश चिह्न यह अवधारित करने में सहायता कर सकता है कि कितने प्रतिशत मामले विलंबित हैं और लक्ष्यित हस्तक्षेप की अपेक्षा है । प्रत्येक प्रकार के मामलों के लिए पहले प्रवेश, पहले निकास के सामान्य सिद्धांत के आधार पर, उच्च न्यायालय को अधिक विलंबित विचाराधीन मामलों वाले न्यायालयों के लिए अधिक संसाधन आबंटित करना चाहिए ।

ग. इसी प्रकार, यदि किसी न्यायालय का निपटान दर सापेक्षतः अधिक है, उस न्यायालय में कुछ मामले काफी पुराने हो सकते हैं और सामूहिक मामला भार की तुलना में बहुत धीमी गति से चल रहे हैं किंतु जो साधारण हो सकते हैं और अधिक तीव्रता से निपटाए जा रहे हों । चूंकि निपटान के कुल दर का औसत विनिर्दि-ट प्रकार के मामलों के निपटान दर के कारण अधिक हो जाता है किंतु निपटान का उच्च कुल दर इस तथ्य को छिपा लेता है कि ऐसे कुछ मामले ऐसे न्यायलायों में काफी लंबी अवधि से लंबित पड़े हुए हैं । अतः, यदि कुछ न्यायालयों का निपटान दर काफी अधिक हो तो उच्च न्यायालय को उन न्यायालयों में पहले यह अवधारित किए बिना कि उनका वर्तमान मामला भार कैसा है, न्यायिक संसाधनों का पुनर्आबंटन नहीं करना चाहिए ।

घ. प्रासंगिकतः, यद्यपि यह सामान्य स्वरूप उभरता है कि प्रणाली को यह ज्ञात होना चाहिए कि पिछले ढेर की निकासी के लिए और निकट भवि-य में पिछले ढेर की समस्या से प्रणाली को निजात दिलाने के लिए कितने अतिरिक्त न्यायिक समय की अपेक्षा है । निपटान दर की रीति से यह पता नहीं चलता कि कितना न्यायिक समय और प्रयास खर्च किया जाए जिससे कि ऐसे सामाजिक और विधिक रूप से सीमांत लोगों की आवश्यकताओं को पूरा किया जा सके जिन्हें अपनी आधारभूत विधिक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए प्रायः अधिक न्यायिक संसाधनों की आवश्यकता की संभावना है । तरीका विभिन्न समूहों की विभिन्न आवश्यकताओं पर आधारित न्यायिक संसाधन आबंटन को अनुकूल बनाने का मार्ग उपलब्ध नहीं कराता । यह प्रख्यापित किए जाने वाले अधिकार की प्रकृति या प्राख्यान करने वाले व्यक्ति पर ध्यान दिए बिना विलंब में कमी की दृ-टि से सभी मामलों को एक जैसा मानता है । अतः, उच्च न्यायालयों द्वारा यह सुनिश्चित करने के लिए अधीनस्थ न्यायालयों को मार्गदर्शक

सिद्धांत उपबंध कराया जाना चाहिए कि पुराने या अधिक जटिल या अधिक पूर्विकता वाले मामले (उदाहरणार्थ, यौन हिंसा से संबंधित मामले) प्रणाली में निष्क्रिय न हो जाएं ।

ङ. अंततः, यदि विशि-ट प्रवर्ग के न्यायाधीश उच्च दर पर मामलों का निपटान कर रहे हैं, यह ऐसे न्यायाधीशों की विनिश्चय करने की गुणता के बारे में कुछ उपदर्शित नहीं करता । तरीके का केंद्रक वर्तमान गुणात्मक मानक से समझौता किए बिना मात्रात्मक उपज प्राप्त करना है । तथापि, विनिश्चय करने की गुणता और मात्रा के बीच अंतर्वलित अनुचित हानि हो सकती है कि मोडल ध्यान नहीं रखता । यदि कुछ न्यायाधीश विनिश्चय करने की गुणता से वस्तुतः समझौता कर रहे हैं और इस प्रकार अधिक मामलों का निपटान करने में समर्थ हैं तो मोडल उन अतिरिक्त न्यायाधीशों की तुलना में अतिरिक्त न्यायाधीशों की कम संख्या की सिफारिश करेगा जिसके लिए अधिक गुणात्मकतः ठोस रीति से मामलों की उसी संख्या का निपटान करने के लिए अपेक्षित होता ।[39] अतः, आयोग यह सिफारिश करता है कि अतिरिक्त न्यायिक संसाधनों का आबंटन करने में उच्च न्यायालयों को संबद्ध न्यायालयों में विनिश्चय करने की गुणता पर अधिक ध्यान देना चाहिए ।

अतः संक्षेप में, इस रिपोर्ट में वर्णित निपटान दर के तरीके को आसन्न अपेक्षित न्यायिक संख्या बतलाने के रूप में देखा जाना चाहिए तब जिसे अन्य बातों के आधार समायोजित और आबंटित किया जा सके जिसमें अन्य सम्मिलित हो सकें, किंतु यहीं तक सीमित न हों : (1) उपलब्ध आंकड़ों में अपरिशुद्धताओं के लिए किए गए समायोजन ; (2) विशे-ाकर भारी संख्या के ऐसे मामले जो काफी अधिक समय से लंबित पड़े हुए हैं जो अधिक न्यायिक संसाधनों की आवश्यकता का उपदर्शन करते हैं और (3) पणधारियों से राज्य और विशि-ट जिलों में विचाराधीनता और न्यायिक कार्यकरण के बारे में सुसंगत फीडबैक ।

6. रिक्तियों का समय से भरा जाना ; अधीनस्थ न्यायपालिका के न्यायाधीशों की सेवानिवृत्ति की आयु में वृद्धि : जैसाकि सारणी XIII यह उपदर्शित करती है कि अधिकांश उच्च न्यायालयों के अधीनस्थ न्यायालयों में भारी रिक्तियां हैं । इसके अतिरिक्त, सेवानिवृत्ति द्वारा प्रत्येक व-र्ा अनेक रिक्तियां सृजित होती हैं । सेवानिवृत्त न्यायाधीश के स्थान पर नए न्यायाधीश का चयन और प्रशिक्षित करने में समय लगता है। इस बीच, पिछला ढेर बढ़ता जाता है । इस चिंता से निपटने के लिए आयोग यह सिफारिश करता है कि नए न्यायाधीशों की भर्ती करने के अलावा पर्याप्त रूप से प्रशिक्षित न्यायिक अधिकारियों की भारी संख्या की आवश्यकता को पूरा करने के लिए अधीनस्थ न्यायाधीशों की सेवानिवृत्ति की आयु बढ़ाकर 62 व-र्ा की जाए । सेवानिवृत्ति की आयु की वृद्धि का

[39] यह उल्लेख करना प्रासंगिक है कि वर्तमान मामले में तारीख 1 फरवरी, 2012 के आदेश में उच्चतम न्यायालय ने उल्लेख किया कि ''न्याय की पहुंच को विशुद्धतः मात्रात्मक आयाम से नहीं देखा जाना चाहिए । समतावादी लोकतंत्र में न्याय की पहुंच का अभिप्राय न्याय के गुणात्मक पहुंच के रूप में भी समझा जाना चाहिए । अतः, न्याय की पहुंच व्यक्ति की न्यायालयों के पहुंच में सुधार करने या प्रतिनिधित्व की गारंटी देने से काफी अधिक है । यह इस बात को सुनिश्चित करने के निबंधनों में परिभाषित किया जाना चाहिए कि विधिक और न्यायिक परिणाम उचित और न्यायसंगत हों ।''

फायदा **अखिल भारतीय न्यायाधीश संगम** बनाम **भारत संघ**[40] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय के निदेशों के निबंधनानुसार न्यायिक अधिकारियों को उपलब्ध कराया जा सकता है । इसके अतिरिक्त, रिक्तियों को समयबद्ध ढंग से भरने की बावत **मलिक मजहर सुल्तान** बनाम **उत्तर प्रदेश लोक सेवा आयोग**[41] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय के निदेशों का कड़ाई से पालन करने की आवश्यकता है ।

7. प्रणाली में व्यापक न्यायिक सुधार की आवश्यकता : वादकारियों की दृ-टि से, विचारण न्यायालय स्तर पर ही नहीं बल्कि न्यायपालिका के सभी स्तर पर उसके मामले का समयबद्ध निपटान अधिक महत्वपूर्ण है । अतः, विलंब की कमी पर लक्ष्यित न्यायिक सुधार न केवल विचारण न्यायालय में बल्कि संपूर्ण न्यायिक प्रणाली में अपेक्षित है । विशि-टतया,

क. यदि विचारण न्यायालयों में न्यायाधीशों की संख्या में महत्वपूर्ण वृद्धि होती है तो विचारण न्यायालयों द्वारा निपटाए जाने वाले मामलों की संख्या में तेजी से वृद्धि होगी । उच्च न्यायालयों में अपील किए जाने वाले मामलों की कुल संख्या में भी वृद्धि होगी । अतः, उच्च न्यायालयों का मामला भार बढ़ जाएगा । यदि उच्च न्यायालय स्तर पर न्यायाधीश संख्या में तत्समान वृद्धि नहीं की जाती तो समग्र प्रणाली के पिछले ढेर से बोझिल बने रहने की संभावना हो जाएगी ।

उच्चतम न्यायालय प्रकाशन न्यायालय समाचार से प्राप्त आंकड़ा यह दर्शित करता है कि उच्च न्यायालय पहले से ही पिछले ढेर से बोझिल हैं और नई फाइलिंग के भी निपटान में सक्षम नहीं हैं । न्यायालय समाचार के हाल ही का वार्-िक आंकड़ा 01.10.2011 से

---

[40] 13 नवंबर, 1991 को विनिश्चित, **आल इंडिया न्यायाधीश संगम** बनाम **भारत संघ,** ए.आई.आर. 1992 एस.सी. 165 वाले मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह निदेश दिया था कि अधीनस्थ न्यायालय के न्यायाधीशों की सेवानिवृत्ति की आयु बढ़ाकर 60 व-र् कर दी जाए । 24 अगस्त, 1993 के आदेश में उस निदेश को उपांतरित कर, न्यायालय ने अभिनिधारित किया कि -

'सेवानिवृत्ति की आयु 60 व-र् बढ़ाने का फायदा न्यायिक प्रणाली में उनकी पिछली सेवा अभिलेख और उनकी सतत् उपयोगिता के साक्ष्य पर ध्यान दिए बिना स्वतः सभी न्यायिक अधिकारियों को उपलब्ध नहीं होगा । फायदा केवल उन्हें उपलब्ध होगा जिनमें संबद्ध उच्च न्यायालय की राय में, सतत् उपयोगी सेवा करने की क्षमता का निर्धारण और मूल्यांकन उच्च न्यायालयों के मुख्य न्यायमूर्तियों द्वारा गठित और अध्यक्षता वाली संबद्ध उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों की समुचित समितियों द्वारा किया जाएगा और मूल्यांकन न्यायिक अधिकारियों के पिछले सेवा अभिलेख, चरित्र पंजिका, निर्णयों की गुणता और अन्य सुसंगत वि-नयों के आधार पर किया जाएगा ।

उच्च न्यायालय के न्यायिक अधिकारियों को लागू संबद्ध सेवा नियमों में अधिकथित अनिवार्य सेवानिवृत्ति की प्रक्रिया का अनुपालन कर 58 व-र् की आयु प्राप्त करने के काफी पूर्व अधिकारियों की दशा में कार्यवाही आरंभ कर पूरी कर लेनी चाहिए । ऐसे लोग जिन्हें इस मानक द्वारा उचित और पात्र नहीं पाया जाएगा, को उच्चतर सेवानिवृत्ति की आयु का फायदा नहीं दिया जाना चाहिए और अनिवार्य सेवानिवृत्ति की उक्त प्रक्रिया का अनुपालन कर 58 व-र् की आयु में ही अनिवार्यतः सेवानिवृत्त कर दिया जाना चाहिए ।

इस रिपोर्ट में आयोग की सिफारिश इस अपवाद के साथ इसी दिशा के समान है कि हम सिफारिश करते हैं कि ऐसे न्यायाधीश जो सेवानिवृत्त होने वाले हैं की सेवा का विस्तार अधिकतम अवधि जिस तक ऐसा विस्तार संभव है के अधीन रहते हुए ऐसे समय तक किया जाए जब तक उनके सेवानिवृत्ति द्वारा कारित रिक्ति भरी नहीं जाती ।

[41] (2008) 17 एस. सी. सी. 703.

30.09.2012 तक की समयावधि के लिए है । इस समयावधि में, यद्यपि 1909543 नए संस्थापन उच्च न्यायालयों में किए गए और केवल 1764607 मामले निपटाए गए थे । अतः, पिछले ढेर में 144936 की वृद्धि हुई । इस समयावधि में औसतन उच्च न्यायालय न्यायाधीशों ने प्रति न्यायाधीश 2821.07 मामले निपटाए । 30.09.2012 तक, 4407861 मामले सभी उच्च न्यायालयों के समक्ष लंबित थे । निपटान के वर्तमान दर पर, उच्च न्यायालयों को संतुलन के लिए **56 अतिरिक्त न्यायाधीशों** और पिछले ढेर की निकासी के लिए **942 अतिरिक्त न्यायाधीशों** की आवश्यकता है । यह उल्लेख करना सुसंगत है कि उच्च न्यायालयों की अनुमोदित संख्या 895 है । 31.12.2012 को इन पदों में से 31.4% पद रिक्त थे । अतः, पहले ही उच्च न्यायालयों में न्यायाधीशों की काफी कमी है । निचली न्यायपालिका में न्यायाधीशों की संख्या में वृद्धि से समस्या और तीव्र होने की संभावना है ।

ख. पर्याप्त अवसंरचनात्मक ढांचा या सहायक कर्मचारियों के बिना, न्यायाधीश की संख्या में वृद्धि विलंब में कमी की रणनीति के रूप में प्रभावी नहीं होगी । अतः, न्यायिक अधिक्रम के सभी स्तरों को सम्मिलित करते हुए सार्थक न्यायिक सुधार के लिए एक व्यवस्थात्मक दृ‍ष्टिकोण की आवश्यकता है ।

ग. अनुकल्पी विवाद समाधान तरीके जैसे अन्य साधन जहां न्याय प्रणाली से बाहर मामलों का निपटान अलग माध्यम से किया जा सकता है और न्यायिक प्रणाली में समग्र विचाराधीनता में कमी लाता है ।[42]

[42] विधि आयोग इस मुद्दे पर अलग से विचार कर रहा है और अनुकल्पी विवाद समाधान तंत्र पर रिपोर्ट प्रस्तुत करने का आशय रखता है ।

अध्याय IV
नि-कर्-ा और सिफारिशें

अंत में, यह कहना गलत नहीं होगा कि सामान्य स्तर पर और संक्षेप में, यह रिपोर्ट एक तरह से बकाया और विलंब के मुद्दे और न्यायिक मानव शक्ति आयोजना - एक ऐसी समस्या जिसकी कई व-र्ों से उपेक्षा हो रही थी, पर विचार करती है । इसे दुर्बल बनाते हुए, विधि आयोग ने अपनी 120वीं रिपोर्ट : ''न्यायपालिका में मानवशक्ति आयोजना : एक रूपरेखा'' में यह मत व्यक्त किया था, आयोग का यह मत था कि सामान्यतः न्यायिक मानवशक्ति आयोजना के प्रश्न की भारत के नियोजित विकास में उपेक्षा की जाती थी । भारत में न्याय प्रशासन के क्षेत्र में नीति निर्धारकों का ध्यान मानवशक्ति आयोजना के विकासशील विज्ञान ने आकृ-ट नहीं किया । सभी असंगठित प्रस्ताव मूलतः कच्चा काम, तदर्थ समस्या के अव्यवस्थित समाधान हैं । मुख्यतः रिपोर्ट में अपनी सीमाएं और असमर्थता जाहिर करते हुए कहा : ''वर्तमान अवसंरचनात्मक ढांचे के आधार पर स्वयं आयोग केवल इस प्रकार का तकनीकी विश्ले-ाण उपलब्ध कराने की स्थिति में नहीं है जिस पर परिवर्तन का ठोस कार्यक्रम परिकल्पित किया जा सके । वस्तुतः, आयोग ने दूसरी बेहतर बात की है और क्षेत्र के ज्ञानवान व्यक्तियों और आम जनता की व्यापक राय मांगी है । किंतु हमें यह स्वीकार करना चाहिए कि सभी प्रयत्नों के बावजूद यह ठोस वैज्ञानिक विश्ले-ाण का बहुत घटिया प्रतिस्थापन है ।'' इस प्रकार, आयोग ने बकाया और विलंब की समस्या से निपटने के लिए कोई वैज्ञानिक तरीका सुझाने में अंर्तनिहित परिसीमाओं के प्रति व्यक्ततः सचेत रहते हुए न्यायिक मानवशक्ति आयोजना के तरीके के रूप में न्यायाधीश जनसंख्या अनुपात तरीके का अवलंब लिया । ऐसा सुझाव देने में, आयोग कुछ अन्य देशों के ऐसे तरीके के प्रचलन से प्रेरित हुआ । आयोग ने अपनी रिपोर्ट में यह सिफारिश की कि तत्समय विद्यमान भारतीय जनसंख्या के प्रति दस लाख पर 10.5 न्यायाधीश के अनुपात को कम से कम प्रति दस लाख 50 न्यायाधीश बढ़ाने का ठोस औचित्य है । इस प्रकार, यह मुख्यतया आंकड़ों और उनके वैज्ञानिक विश्ले-ाण की अनुपलब्धता के कारण है कि आयोग ने न्यायाधीश जनसंख्या अनुपात का साधारण दृ-टिकोण अपनाया । वस्तुतः,रिपोर्ट के पास भारतीय संदर्भ में न्यायाधीश - जनसंख्या अनुपात तरीका अपनाने की शक्ति, कमियां और सुसंगतता का विश्ले-ाण करने का विशे-ाकर इस संदर्भ में कोई अवसर नहीं था कि ऐसी प्रणाली जहां न्यायाधीश-जनसंख्या अनुपात तरीका प्रचलित है, से कई बातों में अपनी निजी भिन्न-भिन्न विशि-टताएं हैं ।

निःसंदेह, हाल के व-र्ों में बकाया, विलंब और न्यायिक मानवशक्ति आयोजना की समस्या के मुद्दे ने न्यायपालिका, कार्यपालिका, मीडिया, नीति निर्माता और आम जनता सहित लगभग सभी मुख्य पणधारकों का ध्यान आकृ-ट किया । तथापि, ध्यान आकृ-ट होने के इस लहर के बावजूद यह व्यापकतः आंकड़ा संग्रहण और इसके विश्ले-ाण के किसी एकरूप और वैज्ञानिक दृ-टिकोण की कमी के कारण है कि बकाया और विलंब के मुद्दे से निपटने के लिए न्यायिक मानवशक्ति आयोजना से संबंधित अधिक वैज्ञानिक और भवि-यलक्षी सुझाव निकालना अब भी एक चुनौती बनी हुई है ।

तथापि, आयोग द्वारा व्यक्त कुंठा और 120वीं रिपोर्ट प्रस्तुत करते समय समस्या का गहराई से विश्ले-ण करने में परिणामी असफलता को पूर्णतः महसूस करते हुए, यह रिपोर्ट कुछ हद तक अधिक विश्ले-णात्मक और वैज्ञानिकतः समस्या से निपटने का एक प्रयास है । क्योंकि आयोग ने यह रिपोर्ट तैयार करने और माननीय उच्चतम न्यायालय को प्रस्तुत उत्तर की प्रक्रिया में सभी संभव स्थान और अवसर का लाभ उठाया जो प्रश्नावली और व्यक्तिगत साक्षात्कार और जानकारी के माध्यम सहित आंकड़ा संग्रहण करने हेतु सोचा जा सका था और इस प्रकार अनुसंधान प्रणाली विज्ञान के क्षेत्र में उपलब्ध आंकड़ा विश्ले-ण के विभिन्न उपकरणों को अपनाकर यथातथ्य विश्ले-ण का संग्रहण किया ।

इस प्रकार एकत्र किए गए आंकड़ें और जानकारी के विश्ले-ण की परीक्षा की तब भारतीय न्यायिक और वृत्ति की संस्कृति की विशि-टताओं पर ध्यान रखते हुए कई अन्य प्रणालियों में व्यवहृत न्यायिक मानवशक्ति आयोजना के विभिन्न तरीकों के आलोक में की गई । यह दृ-टिकोण अपनाकर आयोग ने अंततः यह नि-क-र्ा निकाला कि निम्नलिखित सुझाव और सिफारिशें की जाएं :

निपटान दर तरीका

1. यह कि आंकड़ों की प्रदत्त वर्तमान उपलब्धता में न्यायाधीश-जनसंख्या या न्यायाधीश-संस्थापन अनुपात, आदर्श मामला भार तरीका या समय आधारित तरीके के बजाए अधीनस्थ न्यायालयों हेतु पर्याप्त न्यायाधीश संख्या के परिकलन के लिए निपटान दर तरीका और फार्मूला अपनाया जाए ।

पूर्विकता आधार पर नियुक्त किए जाने वाले न्यायाधीशों की संख्या

2. उच्च न्यायालयों से अभिप्राप्त आंकड़ों से यह उपदर्शित होता है कि न्यायिक प्रणाली बुरी तरह से पिछले ढेर से बोझिल है और वर्तमान फाइलिंग का निपटान करने में भी सक्षम नहीं है और इस प्रकार, पिछले ढेर की समस्या को तीव्र कर रही है । प्रणाली को पिछले ढेर के निपटान और वर्तमान फाइलिंग से संगत बने रहने के लिए भारी न्यायिक संसाधनों की अपेक्षा है । आंकड़ा समाज के सभी वर्गों के लिए समयबद्ध न्याय सुनिश्चित करने और न्याय की पहुंच सुकर बनाने के लिए न्यायाधीश संख्या में वृद्धि करने हेतु तत्काल उपाय करने की आवश्यकता उपदर्शित करता है ।

रा-ट्रीय न्याय परिदान और विधिक सुधार मिशन के सलाहकार परि-द् के संकल्प, मुख्य न्यायमूर्ति और मुख्यमंत्री सम्मेलन, 2013 के संकल्प और प्रधानमंत्री और विधि मंत्री के सार्वजनिक संबोधनों के अनुसार, वर्तमान न्यायाधीश संख्या को अगले पांच व-र्ाों में दोगुना किया जा रहा है । पिछले ढेर की निकासी के लिए अपेक्षित न्यायाधीशों की भारी संख्या और वह समय जो चयन और प्रशिक्षण प्रक्रिया को पूरा करने में और पर्याप्त अवसंरचनात्मक ढांचा सृजित करने में लगेगा, को ध्यान में रखते हुए, विधि आयोग यह सिफारिश करता है कि 3 व-र्ा समय-सीमा में संतुलन बनाने और पिछले ढेर का निपटान करने हेतु अपेक्षित न्यायाधीशों की संख्या पर पूर्विकता के रूप में नए

न्यायाधीशों की भर्ती पर फोकस किया जाए ।[43]

अधीनस्थ न्यायालय न्यायाधीशों की सेवानिवृत्ति की आयु में वृद्धि

3. समुचित रूप से प्रशिक्षित अधीनस्थ न्यायालय न्यायाधीशों की भारी संख्या की आवश्यकता को पूरा करने के लिए अधीनस्थ न्यायाधीशों की सेवानिवृत्ति की आयु बढ़ाकर 62 व-र्ा की जाए । सेवानिवृत्ति की आयु की वृद्धि का फायदा **अखिल भारतीय न्यायाधीश संगम** बनाम **भारत संघ**[44] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय के निदेशों के निबंधनानुसार न्यायिक अधिकारियों को उपलब्ध कराया जाए ।

यातायात/पुलिस चलान मामलों के लिए विशे-न न्यायालयों का सृजन

4. अधीनस्थ न्यायिक सेवा के समक्ष पिछले तीन व-र्ाों के ऐसे यातायात/ पुलिस चालान मामला जो संस्थापनों का 38.7% और सभी लंबित मामलों का 37.4% गठित करता है, से निपटने के लिए विशे-न प्रातःकालीन और सायंकालीन न्यायालय स्थापित किए जाएं । ये न्यायालय नियमित न्यायालयों के अतिरिक्त होने चाहिए जिससे कि वे नियमित न्यायालयों के मामलों के भार को कम कर सकें । इसके अतिरिक्त, न्यायालय परिसर में अभिहित काउंटर पर जुर्माने का आनलाइन संदाय और जुर्माने के संदाय के लिए सुविधाएं उपलब्ध कराई जाएं । यह उपाय ऐसे विशे-न न्यायालयों के समक्ष आगे विचाराधीनता को कम करेगा । इन विशे-न यातायात न्यायालयों की अध्यक्षता के लिए हाल ही के विधि स्नातकों की नियुक्ति संक्षिप्त अवधि अर्थात् 3 व-र्ा के लिए की जाए । इन विशे-न न्यायालयों को केवल जुर्माने वाले मामलों पर विचार करना चाहिए । नि-पक्ष प्रक्रिया सुनिश्चित करने के लिए नियमित न्यायालयों के समक्ष कारावास अंतवर्लित मामलों का विचारण किया जाए ।

यदि विशे-न यातायात/पुलिस चालान न्यायालयों का सृजन नहीं किया जाता है तो यातायात और पुलिस चालान मामलों को हिसाब में लेते हुए नियमित काडर में अपेक्षित न्यायाधीशों की संख्या में और वृद्धि की जाए ।

कर्मचारिवृन्द और अवसंरचना की व्यवस्था

5 अतिरिक्त न्यायालयों के कार्यकरण हेतु अपेक्षित कर्मचारिवृन्द और अवसंरचना की पर्याप्त व्यवस्था की जाए ।[45]

---

[43] उपरोक्त सारणी - 13 देखें ।

[44] **अखिल भारतीय न्यायाधीश संगम** बनाम **भारत संघ,** भारत का उच्चतम न्यायालय, आदेश तारीख 24 अगस्त, 1993.

[45] **अखिल भारतीय न्यायाधीश संगम** बनाम **भारत संघ** (2002) 4 एस. सी.सी. 247 देखें ('हम इस तथ्य के प्रति सचेत हैं कि रातों रात रिक्तियां नहीं भरी जा सकती । अतिरिक्त न्यायाधीश रखने के लिए न केवल पद सृजित करना होगा बल्कि अतिरिक्त न्यायालय कक्ष, भवन, कर्मचारी आदि के रूप में अवसंरचना को भी उपलब्ध कराना होगा ।")

उच्च न्यायालयों द्वारा सावधिक आवश्यकता निर्धारण

6. यह कि वर्तमान अध्ययन 2012 तक के संस्थापन, निपटान और विचाराधीनता के आंकड़ों के विश्ले-ाण पर आधारित है । यह कहना आवश्यक नहीं है कि कालांतर में इन आंकड़ों के परिवर्तित हो जाने की संभावना है जो फाइलिंग और निपटान से संगत बनाए रखने के लिए अतिरिक्त न्यायालयों की अपेक्षा को प्रभावित करेगा । विधि आयोग के पास यह भवि-यवाणी करने की पर्याप्त जानकारी नहीं है कि आने वाले व-ाों में संस्थापनों में कितने परिवर्तन होने की संभावना है ।[46] अतः, उच्च न्यायालयों को संस्थापन और निपटान दर को मानीटर करने के लिए सावधिक न्यायिक आवश्यकता निर्धारण कराने और दिए गए उपरोक्त फार्मूला का उपयोग कर संस्थापन, निपटान, विचाराधीनता और रिक्ति पर आधारित न्यायाधीश संख्या का सावधिक पुनरीक्षण करने की अपेक्षा है ।

7. यह कि, आंकड़ा संग्रहण में एकरूपता की कमी और उच्च न्यायालयों द्वारा अभिलिखित और उपलब्ध आंकड़ों की गुणता की चिंता के बारे में आयोग के समक्ष रहस्योद्घाटन के आलोक में[47], आयोग दृढ़तापूर्वक यह सिफारिश करता है कि उच्च न्यायालयों को पारदर्शिता सुनिश्चित करने और न्यायिक प्रणाली के लिए आंकड़ा आधारित नीति चिरभोग सुकर बनाने के लिए समरूप आंकड़ा संग्रहण और आंकड़ा प्रबंधन तरीके विकसित करने का निदेश दिया जाए ।

प्रणाली के व्यापक सुधार की आवश्यकता

8. सार्थक न्यायिक सुधार के लिए प्रणालीगत परिप्रेक्ष्य से न्यायिक अधिक्रम से सभी स्तरों को सम्मिलित करने की आवश्यकता है । न्यायिक प्रणाली के सभी स्तरों पर मामलों के समयबद्ध निपटान के लिए उपाय करना, संपूर्ण प्रणाली में मानीटरिंग करना और न्यायाधीश की संख्या बढ़ाना, अनुकल्पी विवाद समाधान तरीका जहां उचित हो, अपनाना और संसाधनों का अधिक दक्षपूर्ण आबंटन और उपयोग वादकारियों को समयबद्ध न्याय दिलाने के लक्ष्य को पूरा करने के लिए अपेक्षित है। विशे-ाकर, आयोग यह सुनिश्चित करने के लिए कि नए सृजित अधीनस्थ न्यायालयों द्वारा निपटाए गए अतिरिक्त मामलों से अपीलों/पुनरीक्षणों पर समयबद्ध ढंग से निपटान करने और उच्च न्यायालयों में पहले से ही हुए भारी पिछले ढेर से उचित ढंग से निपटने के लिए उच्च न्यायालयों में न्यायाधीशों की संख्या बढ़ाने की तत्काल आवश्यकता पर बल देता है । अतः, कमी को रोकने के खंडशः दृ-टिकोण को प्रणालीगत परिप्रेक्ष्य के पक्ष में आड़े नहीं आने दिया जाना चाहिए ।

9. यह कि, उच्चतम न्यायालय द्वारा **इम्तियाज अहमद** वाले मामले में 1 फरवरी, 2012 के अपने आदेश में प्रदान की गई मान्यता के अनुसार अतिरिक्त न्यायालयों का सृजन, समयबद्ध न्याय सुनिश्चित करने और न्याय की पहुंच सुकर बनाने के लिए अपेक्षित विभिन्न उपायों में से एक है ।

---

[46] उपरोक्त पाद टिप्पण 38 की चर्चा देखें ।

[47]

आयोग यह मान्यता प्रदान करता है कि न्यायाधीश की संख्या बढ़ाने के अलावा विलंब में कमी करने हेतु समयबद्धता और कार्यपालन निर्देश चिह्न लागू करने जैसे अच्छे न्यायिक प्रबंध व्यवहार के उपयोजन सहित कई अन्य उपाय किए जाने की आवश्यकता है । इस रिपोर्ट में पहले की गई चर्चा के अनुसार आयोग तार्किक मानदंड के आधार पर भिन्न-भिन्न प्रकार के मामलों के समाधान के लिए गैर-आज्ञापक समय ढांचा स्थिर करने की आवश्यकता पर बल देता है ।[48] जब तक न्यायाधीश और वादकारी ऐसी स्प-ट प्रत्याशा नहीं करते कि कितना शीघ्र उनके मामलों के निपटाए जाने की संभावना है तब तक विलंब के लिए कोई उत्तरदायी होगा और प्रणालीगत समस्याओं के बढ़ने की संभावनाएं हैं । अतः, आयोग विभिन्न प्रकार के मामलों के लिए तार्किक, गैर-आज्ञापक समय ढांचा नियत करने और न्यायाधीश कार्यपालन मानक को स्थिर करने के आधार के रूप में ऐसे समय ढांचे का उपयोग करने और न्यायपालिका के लिए अधिक सख्त नीतिगत सिफारिशें करने की तत्काल आवश्यकता को उजागर करने की ईप्सा करता है ।

ह0/-
(न्यायमूर्ति ए. पी. शहा)
अध्यक्ष

ह0/-
(न्यायमूर्ति एस. एन. कपूर)
सदस्य

ह0/-
(प्रो. (डा.) मूलचंद शर्मा)
सदस्य

ह0/-
(न्यायमूर्ति ऊना मेहरा)
सदस्य

ह0/-
(एन. एल. मीणा)
सदस्य-सचिव

ह0/-
(पी. के. मल्होत्रा)
पदेन-सदस्य

---

[48] आयोग मामलों के निपटान के लिए आज्ञापक समय ढांचे की सिफारिश नहीं करता । उच्चतम न्यायालय ने **पी. रामचन्द्र राव** बनाम **कर्नाटक राज्य** (2002) 4 एस. सी.सी. 578 वाले मामले में सात न्यायाधीशों की न्यायपीठ के विनिश्चय में स्प-ट रूप से यह कहा, कि ''सभी आपराधिक कार्यवाहियों के नि-कर्ा हेतु बाहरी समय-सीमा नियत करना या विहित करना न तो उपयुक्त है, न ही संभव और न ही न्यायिकतः अनुज्ञेय है ..... । अधिक से अधिक विहित समयावधि को विचारण या कार्यवाही कर रहे न्यायालयों द्वारा अनुस्मारक के रूप तब लिया जा सकता है जब उन्हें अपने समक्ष मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में अपने न्यायिक विवेक करने और ए. आर. अंतुले वाले मामले में इंगित अनुसार कई सुसंगत कारकों पर विचार करते हुए अवधारित करने के लिए मनाया जाए और यह विनिश्चय किया जाए कि क्या विचारण या कार्यवाही में इतना अधिक विलंब हो गया है जिसे दमनात्मक और अनापेक्षित कहा जा सकेगा । ऐसी समय-सीमाओं को किसी न्यायालय द्वारा विचारण या कार्यवाहियों के आगे जारी रहने के अवरोध के रूप में और न्यायालय को इसे समाप्त करने और अभियुक्त को दो-मुक्त करने या उन्मोचित करने हेतु आज्ञापकतः आबद्धकर के रूप में स्वयमेव नहीं माना जा सकता और नहीं माना जाएगा ।

उपाबंध -I

न्यायमूर्ति पी. वी. रेड्डी
पूर्व न्यायाधीश, भारत का उच्चतम न्यायालय
Justice P. V. REDDI
(Former Judge Supreme Court of India)
अध्यक्ष
भारत का विधि आयोग
Chairman
Law Commission of India

नई दिल्ली/New Delhi
दूरभा-न/Tele : 2301 9465 (R)
2338 4475 (O)
फैक्स/ Fax : 2379 2745 (R)

दिनांक : 25 मई, 2012

प्रिय मुख्य न्यायमूर्ति मदन लोकुर जी,

इम्तियाज अहमद बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** [(2012) 2 एस. सी. सी. 688 में प्रकाशित] वाले मामले में, माननीय उच्चतम न्यायालय ने भारत के विधि आयोग से न्याय की पहुंच बेहतर करने के लिए देश के लिए अपेक्षित अतिरिक्त न्यायालयों की संख्या का निर्धारण करने का अनुरोध किया । उच्चतम न्यायालय के निर्णय का सुसंगत भाग तत्काल निर्देश के लिए संलग्न है । आगे कार्यवाही आरंभ करने के पूर्व, गहन अध्ययन करने और रिपोर्ट प्रस्तुत करने के प्रयोजन के लिए सुसंगत आंकड़ा होना आवश्यक है । विधि आयोग के संयुक्त सचिव ने अपेक्षित जानकारी/आंकड़े के प्रोफार्मा के साथ आपके उच्च न्यायालय के महारजिस्ट्रार को एक पत्र भेजा है । प्रोफार्मा की प्रति तत्काल प्रतिनिर्देश के लिए यहां भेजी जा रही है ।

मैं सुनवाई की अगली तारीख अर्थात् अगस्त, 2012 के प्रथम सप्ताह को न्यायालय के समक्ष रखने के लिए अंतरिम रिपोर्ट तैयार करने पर विचार कर रहा हूं ।

मैं कृतज्ञ रहूंगा यदि आप रजिस्ट्रार को पूर्विकता आधार पर आंकड़ा/जानकारी एकत्र कर और यथाशीघ्र एक मास या छह सप्ताह के भीतर मेरे कार्यालय को भेजने का निदेश दें । यह सहायक होगा यदि रजिस्ट्रार कार्यालय के किसी अधिकारी को मेरे कार्यालय से समन्वय करने हेतु नामित किया जाए । संभवतः न्यायिक अकादमी/जे. टी. आई. को आंकड़ों का मिलान करने के कार्य और कुछ प्रश्नों का उत्तर देने के कार्य में सम्मिलित किया जाए ।

सादर,

ह0/-

(पी. वी. रेड्डी)

माननीय न्यायमूर्ति मदन बी. लोकुर
मुख्य न्यायमूर्ति, आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय, हैदराबाद

अतिरिक्त न्यायालय परियोजना : वाला मामला
तारीख 31.12.2011 को उपलब्ध आंकड़ा कृपया प्रस्तुत किया जाए

1. वर्तमान में कार्यरत (काडरवार और जिला वार) राज्य के विभिन्न प्रवर्गों के अधीनस्थ न्यायालयों की संख्या और अनुमोदित संख्या ;

(क) डी.जे./ए.डी.जे./सी.एम.एम. -नियमित और त्वरित निपटान का न्यायालय, विशे-ा न्यायालय (उदाहरणार्थ - भ्र-टाचार निवारण अधिनियम वाले मामले) अधिकरण (औद्योगिक/श्रम, विक्रय कर आदि) कुटुम्ब न्यायालय ;

(ख) वरि-ठ सिविल न्यायाधीश ;

(ग) कनि-ठ सिविल न्यायाधीश/न्यायिक मजिस्ट्रेट प्रथम वर्ग (जो प्रशिक्षण ले रहे हैं और तैनाती की प्रतीक्षा कर रहे हैं को पृथक से बताया जाए) ;

(घ) विशे-ा न्यायिक मजिस्ट्रेट (जिसके अंतर्गत हाल के केंद्रीय स्कीम के अधीन त्वरित निपटान सम्मिलित है) ।

2. जिलों की संख्या और ऐसे जिलों की संख्या जिनमें अधिक फाइलिंग/ विचाराधीनता है । प्रत्येक जिले की जनसंख्या ।

3. क्या कनि-ठ न्यायाधीशों की भर्ती पी. एस. सी. द्वारा या उच्च न्यायालय द्वारा की जाती है ?
अंतिम भर्ती कब की गई थी ?
रिक्तियों का कोई विशि-ट कारण और भर्ती में कोई अवरोध ?

4. (क) उपरोक्त विनिर्दि-ट न्यायालयों के प्रत्येक प्रवर्गों में जिलावार सिविल (ई.पी. सहित) और दांडिक मामलों की विचाराधीनता दर्शाते हुए विवरण ।

(ख) प्रत्येक लंबित मामलों का वर्गीकरण, उदाहरणार्थ,

(i) सिविल : धन वाद, अन्य प्रकार के वाद, सिविल अपील, मोटर दुर्घटना प्रतिकर मामला, भूमि प्रतिकर मामला, वैवाहिक विवाद, औद्योगिक और श्रम विवाद, नि-पादन अर्जी, आदि ।

(ii) (क) क्या अंर्तवर्ती आवेदनों की गणना लंबित मामलों में की जाती है (जैसा उच्चतम न्यायालय समाचार में दर्शित है) ?

(ख) अंतरिम अनुतो-ा के लिए लंबित और व-र्ा के दौरान निपटाए गए अंतवर्ती आवेदनों की संख्या को भी प्रस्तुत किया जाए ।

(ग) **दांडिक :** सेशन न्यायाधीशों और सहायक सेशन न्यायाधीशों के न्यायालयों में सेशन मामलों की संख्या ।

मजिस्ट्रेट न्यायालयों में भा. दं. सं. अपराधों से संबंधित मामले (महिला और बालक के विरुद्ध अपराध, जिसके अंतर्गत घरेलू हिंसा है, वाले मामलों को पृथकतः बताया जाए)

विशे-न अधिनियमितियां, अर्थात् परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138, अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति (पी. ए. अधिनियम), भ्र-टाचार मामले, आर्थिक अपराध, एन. डी. पी. एस., दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अधीन अपराधों से संबंधित मामले ।

दांडिक अपीलें और पुनरीक्षण ।

संक्षिप्त विचारण मामले ।

5. प्रत्येक प्रवर्ग के न्यायालयों (जिला न्यायाधीश, वरि-ठ सिविल जज, कनि-ठ सिविल जज/मजिस्ट्रेट, विशे-न न्यायालय और त्वरित निपटान न्यायालय) में पूर्ववर्ती तीन व-र्ा (अर्थात् 2009, 2010 और 2011) के दौरान सिविल और आपराधिक मामलों का संस्थापन और निपटान दर्शाते हुए विवरण ।

कृपया ध्यान दें : प्रत्येक प्रवर्ग के न्यायालयों में संस्थित और उनके द्वारा निपटाए गए मामलों के प्रकार (स्तंभ 3(ख) (i) और 3(ग) में यथावर्णित) का ब्यौरा उपलब्ध कराया जाए ।

6. व-र्ा 2010 और 2011 के दौरान प्रत्येक प्रवर्ग के न्यायालयों द्वारा प्रत्येक जिले में निपटाए गए प्रतिवादित और अप्रतिवादित मामले (सुलझाए गए सहित) (प्रतिवादित/ सुलझाए गए मामलों में मामले की प्रकृति का वृहत् वर्गीकरण दिया जाए, यदि संभव हो)

7. 31.12.2011 को (i) 3 व-र्ा (ii) 5 व-र्ा से अधिक समय से लंबित सिविल और आपराधिक मामले ।

8. (क) पिछले दो व-र्ाों के दौरान राज्य में प्रति न्यायाधीश सिविल मामलों (कुल एक साथ) के निपटान की औसत दर क्या है । अनुकल्पतः कम से कम तीन जिलों (भारी, मध्यम, हल्के विचाराधीनता वाले जिलें में निपटान का औसत दर दर्शाया जाए ।

(ख) आपराधिक मामलों (सभी प्रवर्गों को एक साथ) के बारे में ऐसी ही जानकारी (1) प्रत्येक छोटे मामलों अर्थात् यातायात चालान आदि को छोड़कर और (2) प्रत्येक छोटे मामलों को सम्मिलित कर उपलब्ध कराई जाए ।

9. जिले में सिविल/आपराधिक मामलों के फाइल किए जाने का रुझान ? जिले में सामूहिक मुकदमेबाजी का क्या कारण है ?

10. (क) न्यायिक अधिकारियों के कार्यपालन का मूल्यांकन करने हेतु उच्च न्यायालय द्वारा

अपनाया गया तरीका ।

(ख) विभिन्न प्रवर्गों के सिविल और आपराधिक मामलों की बावत न्यायिक अधिकारी काडर-वार (यूनिट और ग्रेड के निबंधनों में) और अगला उच्च ग्रेड (न्यूनतम से अधिक) प्राप्त करने के लिए नियत निम्नतम लक्ष्य ।

11. वर्ष में न्यायिक कार्य के लिए विहित कार्य दिवस की संख्या और प्रतिदिन कार्य समय की अवधि ।

12. कितने त्वरित निपटान विशेष मजिस्ट्रेट न्यायालय (प्रातः/सायं न्यायालय) और ग्राम न्यायालय कार्य कर रहे हैं ? उन्हें कितने मामले अंतरित किए गए हैं ?

13. ऐसा युक्तियुक्त कार्यभार क्या है जो प्रत्येक प्रवर्ग के न्यायालय (जिला न्यायाधीश, वरिष्ठ सिविल न्यायाधीश, कनिष्ठ सिविल न्यायाधीश/मजिस्ट्रेट) बेहतर और शीघ्र न्याय स्थापित करने के लिए कर सकते हैं ?

14. (क) क्या परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 वाले मामलों के लिए **अनन्य** न्यायालय हैं ? और कितने ?

(ख) क्या सभी अंतवर्ती आवेदनों (विचारण-पूर्व) और जमानत आवेदनों का आबंटन ऐसे शहर जहां कई न्यायालय कार्य करते हैं, में स्थित एक या दो न्यायालयों को किया जाना चाहिए ?

15 (क) क्या पुराने मामलों के लिए अनन्य मामले होने चाहिए ?

(ख) पुराने मामलों को पूर्विकता से निपटाने के लिए उठाया गया कोई विनिर्दिष्ट उपाय ?

(क) कितने वर्ष के (सिविल/आपराधिक) मामलों को ''पुराना'' माना जाए और ''बकाया'' के विवरण के भीतर आए ?

16. (क) क्या हाल ही में अननुसचिवीय कर्मचारी (जिसके अंतर्गत प्रक्रिया सेवा कर्मचारी, अभिलेखपाल, टंकक/आशुलिपिक) की संख्या में वृद्धि करने की आवश्यकता है ? यदि हां, किस प्रतिशतता में ?

कृपया ध्यान दे : यदि उच्च न्यायालय का रजिस्ट्रार कार्यालय एक बार में आंकड़ा/ जानकारी देने की स्थिति में न हो, तो वह इसे दो किश्तों में भेज सकता है ।

उपाबंध -II

फा. सं. 6(3)224/2012-एलसी(एलएस)
भारत सरकार
विधि और न्याय मंत्रालय
विधि कार्य विभाग
भारत का विधि आयोग

हिंदुस्तान हाउस, 14वां तल, के. जी. मार्ग
नई दिल्ली - 110 001
तारीख : 19.08.2013

महा रजिस्ट्रार
उच्च न्यायालय, इलाहाबाद
इलाहाबाद, उ.प्र.

वि-नय : **इम्तियाज अहमद** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** (एआईआर 2012 एससी 642) - आदेश तारीख 01.02.2012 - उच्चतम न्यायालय ।

महोदय,

उपरोक्त वर्णित मामले में उच्चतम न्यायालय के आदेश तारीख 01.02.2013 के अनुसरण में भारत के विधि आयोग ने पत्र अर्द्ध शा. सं. 6(3)224/2012-एलसी (एलएस) तारीख 28.05.2012 द्वारा उच्च न्यायालयों से अधीनस्थ न्यायालयों में संस्थित निपटाए गए और लंबित मामलों के बारे में कतिपय जानकारी देने का अनुरोध किया था। उच्च न्यायालय के उत्तरों आधार पर 03.07.2013 को उच्चतम न्यायालय को अंतरिम रिपोर्ट प्रस्तुत की गई थी । अक्तूबर, 2013 को अगली सुनवाई पर उच्चतम न्यायालय को अंतिम रिपोर्ट दिए जाने के पूर्व अब कतिपय अतिरिक्त जानकारी अपेक्षित है । अतः, आपसे अनुरोध है कि संबद्ध अधिकारियों को पूर्विकता आधार पर और अधिक से अधिक इस पत्र की प्राप्ति से दो सप्ताह के भीतर प्रश्नावली में यथावर्णित संलग्न प्ररुप में जानकारी देने का अनुदेश दे ।

भवदीय

संलग्न : उपरोक्त

(एन.एल. मीणा)
सदस्य सचिव

प्रश्नावली

अपेक्षित जानकारी

1. न्यायालयों के प्रत्येक तीन काडरों के लिए 2012 (01.01.2012 से 31.12.2012 तक) सभी मामलों (सिविल और आपराधिक) के संस्थापन और निपटान दर्शाने वाला विवरण :

(क) उच्चतर न्यायिक सेवा काडर

(ख) सिविल न्यायाधीश (सीनियर डिवीजन) काडर

(ग) सिविल न्यायाधीश (जूनियर डिवीजन) काडर

2. प्रत्येक काडर में 31.12.2012 को मामलों (सिविल और आपराधिक) की कुल विचाराधीनता :

(क) उच्चतर न्यायिक सेवा काडर

(ख) सिविल न्यायाधीश (सीनियर डिवीजन) काडर

(ग) सिविल न्यायाधीश (जूनियर डिवीजन) काडर

3. प्रश्न सं. 2 के उत्तर में वर्णित कुल विचाराधीनता में से, प्रत्येक काडर के समक्ष मामलों की कुल संख्या जो 31.12.2012 को एक वर्ष से अधिक समय से लंबित रहे हैं

4. 31.12.2012 को निम्नलिखित तीन काडर में अधीनस्थ न्यायालयों में कार्यरत न्यायाधीशों की अनुमोदित संख्या

(क) उच्चतर न्यायिक सेवा काडर

(ख) सिविल न्यायाधीश (सीनियर डिवीजन) काडर

(ग) सिविल न्यायाधीश (जूनियर डिवीजन) काडर

5. 31.12.2012 को (क) उच्चतर न्यायिक सेवा (ख) सिविल न्यायाधीश (सीनियर डिवीजन) और (ग) सिविल न्यायाधीश (जूनियर डिवीजन) के काडरों में न्यायाधीशों की कार्यरत संख्या और रिक्तियों की संख्या । कार्यरत संख्या की संगणना करते समय, कृपया उन न्यायाधीशों को अपवर्जित करें जो ऐसे पदों पर प्रतिनियुक्ति पर है जहां वे न्यायालय के रूप कार्य नहीं कर रहे हैं ।

कृपया निम्नलिखित प्ररुप में उपरोक्त जानकारी (प्रश्न सं. 1-5) उपलब्ध कराएं :

काडर	01.01.2012 से 31.12.2012 तक मामलों का संस्थापन	01.01.2012 से 31.12.2012 तक निपटान	31.12.2012 को कुल विचाराधीन मामले	31.12.2012 को एक वर्ष से अधिक समय से लंबित मामलों की	31.12.2012 को अनुमोदित संख्या	31.12.2012 को कार्यरत संख्या (प्रतिनियुक्ति को छोड़कर)	31.12.2012 को रिक्तियां

				संख्या			
उच्चतर न्यायिक सेवा							
सिविल न्यायाधीश (सीनियर डिवीजन							
सिविल न्यायाधीश (जूनियर डिवीजन)							

6. क्या हत्या, व्यपहरण, धन वाद, आदि जैसे विभिन्न प्रकार के मामलों के विचारण के लिए समय-सीमा नियत की गई है ?

(क) यदि हां, तो कृपया प्रत्येक प्रकार के मामले के लिए समय-सीमा का विस्तृत ब्यौरा दें ।

(ख) किस आधार पर ये समय-सीमा नियत किए गए हैं ? कृपया समुचित विनियम या आदेश की प्रति उपलब्ध कराएं, जिसके अनुसरण में प्रत्येक प्रकार के मामले की समय-सीमा निर्धारित की गई है ।

7. क्या सिविल और आपराधिक मामलों के अंतरिम/अंतवर्ती आवेदन, जमानत आवेदन, और मजिस्ट्रेट के समक्ष सुपुर्दगी कार्यवाहियों की गणना प्रश्न सं. 1 और 2 के उत्तर में दिए गए आंकड़ों में संस्थापन, निपटान और विचाराधीनता के प्रति की गई है?

8. क्या प्रश्न सं. 1 और 2 के उत्तर में उपलब्ध कराए गए आंकड़े में संस्थापन, निपटान और विचाराधीनता के प्रति यातायात और पुलिस चालान की गणना की गई है?

9. क्या संस्थापनों, निपटान और विचाराधीनता के प्रति अंतवर्ती आवेदनों, जमानत आवंदनों, सुपुर्दगी कार्यवाहियों और यातायात तथा पुलिस चालानों की गणना करने या न करने की पद्धति सभी जिलों में समरूप है ?

10. न्यायालय के प्रत्येक तीन काडर में पिछले दस व-र्षों (2002 से 2012 तक) के प्रत्येक व-र्ष के सभी सिविल और आपराधिक मालों के संस्थापन और निपटान आंकड़ों को दर्शाने वाला विवरण :

(क) उच्चतर न्यायिक सेवा काडर

(ख) सिविल न्यायाधीश (सीनियर डिवीजन) काडर

(ग) सिविल न्यायाधीश (जूनियर डिवीजन) काडर

11. काडर-वार 2002-2012 के प्रत्येक व-र्ष के अंतिम दिन को सभी सिविल और आपराधिक मामलों की कुल विचाराधीनता

(क) उच्चतर न्यायिक सेवा काडर

(ख) सिविल न्यायाधीश (सीनियर डिवीजन) काडर

(ग) सिविल न्यायाधीश (जूनियर डिवीजन) काडर

12. 2002-2012 (प्रत्येक व-र्ष के अंतिम दिन को) से प्रत्येक व-र्ष निम्नलिखित तीन काडरों में अधीनस्थ न्यायालयों में कार्यरत न्यायाधीशों की अनुमोदित संख्या :

(क) उच्चतर न्यायिक सेवा काडर

(ख) सिविल न्यायाधीश (सीनियर डिवीजन) काडर

(ग) सिविल न्यायाधीश (जूनियर डिवीजन) काडर

13. 2002-2012 (प्रत्येक व-र्ा के अंतिम दिन को) से प्रत्येक व-र्ा (क) उच्चतर न्यायिक सेवा (ख) सिविल न्यायाधीश (सीनियर डिवीजन) और (ग) सिविल न्यायाधीश (जूनियर डिवीजन) के काडरों में न्यायाधीशों की कार्यरत संख्या और रिक्तियों की संख्या । कार्यरत संख्या की संगणना करते समय, कृपया उन न्यायाधीशों को अपवर्जित करें जो ऐसे पदों पर प्रतिनियुक्ति पर है जहां वे न्यायालय के रूप कार्य नहीं कर रहे हैं ।

कृपया निम्नलिखित प्ररुप में उपरोक्त जानकारी (प्रश्न सं. 10-13) उपलब्ध कराएं :

व-र्ा	काडर	संस्थापन	निपटान	31.12.20.. को कुल विचाराधीनता	31.12.20.. को अनुमोदित संख्या	31.12.20.. . को अनुमोदित संख्या	31.12.20... . का (प्रतिनियुक्ति अपवर्जित/ कार्यरत सं.	31.12.20 .. को रिक्तियां
	उच्चतर न्यायिक सेवा							
	सिविल न्यायाधीश (सीनियर डिवीजन							
	सिविल न्यायाधीश (जूनियर डिवीजन)							

14. **यदि** प्रश्न संख्या 10 और 11 के उत्तर में दिए गए संस्थापन, निपटान और विचाराधीनता के आंकड़ों में अंतरिम/अंतवर्ती/जमानत आवेदन और सुपुर्दगी कार्यवाहियां सम्मिलित हैं, तो कृपया निम्नलिखित प्ररुप में प्रत्येक तीन काडरों के पिछले दस व-र्ा के ऐसे अंतरिम/अंतवर्ती/जमानत आवेदन और सुपुदर्गी कार्यवाहियों के संस्थापन, निपटान और विचाराधीनता के आंकड़े पृथकतः उपलब्ध कराएं :

व-र्ा	काडर	आईएएस का संस्थापन	आईएएस का निपटान	31.12.20... तक
	उच्चतर न्यायिक सेवा			
	सिविल न्यायाधीश (सीनियर डिवीजन			
	सिविल न्यायाधीश (जूनियर डिवीजन)			

15. (क) क्या प्रश्न सं. 10 और 11 के उत्तर में 2002-2012 के उपलब्ध संस्थापन, निपटान और विचाराधनीता के आंकड़ों में यातायात और पुलिस चालान सम्मिलित हैं ?

(ख) यातायात और पुलिस चालानों की संख्या जो प्रत्येक तीन काडर के न्यायालयों में 2002-2012 से प्रत्येक वर्ष संस्थित, निपटाए गए और लंबित थे ।

(क) उच्चतर न्यायिक सेवा काडर

(ख) सिविल न्यायाधीश (सीनियर डिवीजन) काडर

(ग) सिविल न्यायाधीश (जूनियर डिवीजन) काडर

कृपया नीचे प्ररुप में आंकड़े उपलब्ध कराएं :

वर्ष	काडर	संस्थापन	निपटान	31.12.20... को लंबित
	उच्चतर न्यायिक सेवा			
	सिविल न्यायाधीश (सीनियर डिवीजन सिविल न्यायाधीश (जूनियर डिवीजन)			

16. परक्राम्य लिखत अधिनियम, 1882 की धारा 138 के लिए पिछले दस वर्षों से (2002 से 2012 तक) के प्रत्येक वर्ष के संस्थापन, निपटान और विचाराधीनता के आंकड़े दर्शाते हुए विवरण निम्नलिखित प्ररुप में उपलब्ध कराएं :

परक्राम्य लिखत अधिनियम, 1882 की धारा 138 हेतु जानकारी

वर्ष	काडर	संस्थापन	निपटान	31.12.20... को लंबित
	उच्चतर न्यायिक सेवा			
	सिविल न्यायाधीश (सीनियर डिवीजन सिविल न्यायाधीश (जूनियर डिवीजन)			

उपाबंध - III संस्थापन, निपटान, विचाराधीनता और उच्चतर न्यायिक सेवा की अनुमोदित संख्या

उच्च न्यायालय	वर्ष	संस्थापन	निपटान	विचाराधीनता	अनुमोदित संख्या	कार्यरत संख्या
मुंबई	2002	168768	176399	321772	345	307
	2003	171774	172186	321360	356	284
	2004	198562	205823	314099	545	409
	2005	187018	200292	300825	547	406
	2006	206184	210261	296748	550	369
	2007	221350	211654	306444	556	361
	2008	233978	228837	311585	556	364
	2009	237697	206209	343073	560	357
	2010	243740	228270	358543	564	369
	2011	244960	243361	360142	478	400
	2012	285048	224198	420992	480	361
हिमाचल प्रदेश	2002	22132	21420	18806	30	17
	2003	23711	24544	17973	39	27
	2004	26642	26217	18398	40	27
	2005	26457	27136	17719	41	23
	2006	24205	23064	18860	43	26
	2007	26717	26263	19314	43	27
	2008	29189	26783	21720	43	24
	2009	27979	26097	23602	43	26
	2010	31612	30618	24596	43	24
	2011	31235	30510	25321	43	22
	2012	33765	32524	26562	43	25
हरियाणा	2002	44161	45972	70821	105	89
	2003	45298	45049	71070	105	84

	2004	46160	43364	73866	105	83
	2005	47782	46267	75381	109	80
	2006	70089	69625	75845	109	72
	2007	73853	73556	76142	125	73
	2008	83650	85270	74522	133	103
	2009	91484	92667	73339	133	105
	2010	98869	86518	85690	134	98
	2011	117668	103096	100262	135	83
	2012	94647	85485	109424	153	110
चंडीगढ़	2002	2530	2956	5935	5	5
	2003	3380	2729	6586	5	5
	2004	2655	2674	6567	5	4
	2005	3800	3294	7073	6	6
	2006	3882	2968	7987	6	6
	2007	5036	5469	7554	6	6
	2008	4201	4423	7332	6	6
	2009	4488	4191	7629	6	6
	2010	5162	4363	8428	6	6
	2011	6131	6293	8266	6	6
	2012	6569	7202	7633	6	6
आंध्र प्रदेश	2002	95731	87434	151471	124	115
	2003	98824	102606	147689	125	123
	2004	96093	94684	149098	125	123
	2005	71965	77935	143128	130	124
	2006	91540	96932	137736	139	118
	2007	101748	104141	135343	145	125
	2008	100496	90565	145274	163	124
	2009	111841	106482	150633	165	146
	2010	112209	109085	153757	165	129
	2011	112710	111892	154575	174	139
	2012	113250	106997	161488	179	136

	2002	18568	14523	14481	45	34
	2003	11916	11665	16072	45	36
	2004	19230	22770	14988	46	34
	2005	13879	14546	15794	46	35
	2006	25473	25105	16228	50	36
उत्तराखंड	2007	16180	18051	17187	59	33
	2008	18551	17360	18765	72	33
	2009	16779	15640	20016	72	26
	2010	26451	28451	20538	72	33
	2011	22780	24869	20084	74	41
	2012	23974	23462	20548	51	42
	2002	21107	21230	9432	53	44
	2003	17335	13795	12972	53	44
	2004	21910	19697	15185	53	44
	2005	26288	19623	21850	53	40
	2006	48145	49341	20654	53	39
जम्मू एवं कश्मीर	2007	36884	31209	26330	54	42
	2008	33795	29327	30798	66	55
	2009	36501	35366	31933	66	50
	2010	38675	6275	34333	66	45
	2011	53642	49275	38700	68	52
	2012	25327	25994	38033	67	50
	2002	52909	49989	251749	394	176
	2003	58056	49647	218584	396	187
	2004	64354	61036	221897	410	185
	2005	64699	50767	230405	412	245
बिहार	2006	64402	51292	243929	428	242
	2007	60915	56923	249935	426	294
	2008	67743	66256	250835	428	286
	2009	68884	69014	249392	428	379
	2010	67839	73613	243456	446	356

	2011	63367	60378	246328	470	328
	2012	71569	59961	257797	503	290
पंजाब एवं हरियाणा	2002	35735	40987	58997	88	85
	2003	38379	40170	57206	88	76
	2004	40092	49823	47475	88	64
	2005	57732	46932	58275	89	62
	2006	55148	44793	68630	89	56
	2007	72913	64202	77341	107	56
	2008	92718	92799	77260	107	87
	2009	71855	71623	77492	107	91
	2010	71118	63154	85456	125	87
	2011	82838	83135	85159	127	99
	2012	125894	117967	93086	128	93
कर्नाटक	2002	91520	80233	138417	153	114
	2003	86221	86251	138387	207	153
	2004	99392	96553	141226	262	187
	2005	117979	119727	139478	265	167
	2006	129518	119064	149932	271	151
	2007	119167	117248	151851	273	145
	2008	112183	113267	150767	275	140
	2009	146300	136451	160616	281	234
	2010	139780	140325	160071	292	217
	2011	141359	143195	158235	292	222
	2012	142910	136334	164811	332	190
दिल्ली	2002	91244	53634	120158	169	118
	2003	45828	51749	106037	169	135
	2004	43836	47202	74235	174	119
	2005	48816	48316	74735	174	111
	2006	52364	48073	79667	174	126
	2007	56459	52572	86622	175	126
	2008	60103	55279	91446	191	158

	2009	71998	62419	101025	203	153
	2010	69631	77850	92806	206	165
	2011	72609	71949	92115	221	158
	2012	73883	71073	94864	226	172
केरल	2002	121430	107366	217648	100	100
	2003	128351	127210	218789	107	107
	2004	134261	123887	248586	110	107
	2005	165330	152400	261008	127	127
	2006	145771	148588	258191	129	125
	2007	133451	150005	241637	129	121
	2008	137048	146959	231726	129	107
	2009	132604	138548	225782	129	115
	2010	136551	138189	224144	129	114
	2011	149246	140916	232474	132	109
	2012	156335	145905	242904	134	128
सिक्किम	2002	1054	1045	255	7	6
	2003	941	936	190	7	6
	2004	1017	864	343	7	6
	2005	902	812	428	7	5
	2006	876	834	470	7	4
	2007	777	716	531	7	4
	2008	840	785	586	7	5
	2009	1032	970	648	7	5
	2010	1643	1551	740	7	6
	2011	1670	1565	845	7	6
	2012	1459	1580	724	9	4
गुजरात	2002	132766	127295	409006	265	143
	2003	116774	102181	423599	335	163
	2004	116544	133780	420530	337	240
	2005	121135	130468	411197	265	200
	2006	185536	212431	386482	269	174

	2007	149335	157742	378075	300	155
	2008	175290	169923	388540	310	173
	2009	148877	166190	371227	323	153
	2010	157403	166264	369043	351	141
	2011	154737	160756	363024	312	149
	2012	156922	174407	345539	312	175
संपूर्ण	**2002**	**899655**	**830483**	**1788948**	**1883**	**1353**
	2003	**846788**	**830718**	**1756514**	**2037**	**1430**
	2004	**910748**	**928374**	**1746493**	**2307**	**1392**
	2005	**953782**	**938515**	**1757296**	**2271**	**1631**
	2006	**1103133**	**1102371**	**1761359**	**2317**	**1544**
	2007	**1074785**	**1069751**	**1774306**	**2405**	**1568**
	2008	**1149785**	**1127833**	**1801156**	**2486**	**1665**
	2009	**1168319**	**1131867**	**1836407**	**2523**	**1846**
	2010	**1200683**	**1154526**	**1861601**	**2606**	**1790**
	2011	**1254952**	**1231190**	**1885530**	**2539**	**1814**
	2012	**1311552**	**1213089**	**1984405**	**2623**	**1782**

उपाबंध - **IV** संस्थापन, निपटान, लंबित और अधीनस्थ न्यायिक सेवा के न्यायाधीशों की संख्या

उच्च न्यायालय	वर्ष	संस्थापन	निपटान	विचाराधीनता	अनुमोदित संख्या	कार्यरत संख्या
मुंबई	2002	1858778	1682028	2626644	1048	889
	2003	1767268	1550666	2843246	1053	863
	2004	2003912	1480635	3366523	1058	969
	2005	2523274	1974953	3914844	1061	972
	2006	1976029	2039602	3851271	1161	1135
	2007	1430549	1542482	3739338	1341	1159
	2008	1635798	1547955	3827181	1342	1275
	2009	1519784	1531580	3815385	1497	1452
	2010	1895070	2164393	3546062	1525	1499
	2011	1751317	2381567	2915812	1538	1437
	2012	1464559	1824057	2556314	1546	1394
हिमाचल प्रदेश	2002	140699	135087	130448	88	59
	2003	136709	129385	137772	88	68
	2004	158985	149590	147167	88	70
	2005	166729	154199	159697	76	74
	2006	162789	188529	133957	81	74
	2007	129584	139945	123596	83	71
	2008	126184	124834	124946	83	72
	2009	156464	145046	136364	83	73
	2010	187331	172145	151550	88	75
	2011	194830	182152	164228	89	78
	2012	247301	213528	198001	89	75
हरियाणा	2002	423340	370009	539894	198	120
	2003	316309	323406	532797	198	119
	2004	213447	233370	512874	198	129
	2005	233946	315353	431467	198	124
	2006	268942	251279	449130	198	150
	2007	308042	331287	480292	264	151

	2008	358493	362896	475889	264	176
	2009	318733	307818	486804	273	179
	2010	337077	346630	477251	276	173
	2011	484297	472998	488550	341	249
	2012	614417	648106	454861	375	288
चंडीगढ़	2002	40038	37174	51488	14	12
	2003	41015	34694	57809	14	11
	2004	51820	46005	63624	14	12
	2005	60212	50915	72921	14	12
	2006	62537	50358	85100	14	13
	2007	65436	55480	95056	14	13
	2008	109796	112273	92579	14	13
	2009	99830	104886	87523	14	13
	2010	103210	118796	71937	14	14
	2011	135405	155492	51850	14	14
	2012	121828	131356	42322	14	14
आंध्र प्रदेश	2002	492477	464648	731227	563	493
	2003	511811	454374	788664	564	484
	2004	498792	470948	816508	569	545
	2005	465612	464831	817289	570	499
	2006	494559	501153	810695	580	534
	2007	546465	540849	816311	653	489
	2008	561129	563280	814160	656	491
	2009	519170	524953	808377	657	630
	2010	478351	477295	809433	657	600
	2011	474233	492504	791162	660	609
	2012	476045	503752	763455	661	597
उत्तराखंड	2002	63471	60685	98761	100	57
	2003	84094	75421	106094	105	67
	2004	125150	110953	117835	109	66
	2005	81566	80485	117443	109	60
	2006	130455	133291	114541	109	58

	2007	115015	102868	123858	107	58
	2008	158277	130079	151669	159	80
	2009	136623	119476	168704	159	89
	2010	197015	228142	135055	159	96
	2011	167138	174908	125650	160	92
	2012	173196	154947	143947	170	108
जम्मू एवं कश्मीर	2002	107927	103444	105252	149	138
	2003	121061	113981	112332	149	129
	2004	60277	125781	116758	149	132
	2005	138964	125633	130089	149	128
	2006	223656	226049	128566	149	136
	2007	200788	189435	139048	149	120
	2008	153970	145034	147984	141	99
	2009	200021	197751	150254	141	100
	2010	204034	199601	154687	141	100
	2011	238839	225918	167608	139	121
	2012	250609	265106	153111	139	122
बिहार	2002	241112	184295	891689	930	785
	2003	248430	194065	946054	930	764
	2004	250115	176547	1019622	930	745
	2005	271572	201072	1006926	934	615
	2006	283471	224219	1065759	934	597
	2007	263979	195989	1205011	934	543
	2008	269699	208856	1182508	935	836
	2009	292312	296060	1241441	939	670
	2010	299184	242890	1269602	977	624
	2011	292951	227256	1360978	977	619
	2012	345838	244822	1453583	984	619
पंजाब	2002	536029	491104	440067	213	132
	2003	545074	517127	468014	213	131
	2004	426638	395929	498723	213	176
	2005	532490	529032	502181	239	170

	2006	508928	513275	497834	239	202
	2007	500368	483458	514744	239	185
	2008	424989	445770	493963	239	222
	2009	370892	368029	496826	239	206
	2010	414131	427068	483889	301	217
	2011	579696	595542	468043	366	267
	2012	616895	640960	443978	403	322
कर्नाटक	2002	512990	439741	775525	535	426
	2003	462217	449815	787927	551	400
	2004	477312	442256	822983	561	450
	2005	507070	477151	852902	562	464
	2006	509084	492151	869835	583	458
	2007	548609	534226	884218	595	449
	2008	552894	553754	883358	622	455
	2009	578134	696561	764931	632	534
	2010	513755	500509	778177	649	522
	2011	528117	489463	816831	652	517
	2012	593277	562940	847168	754	516
दिल्ली	2002	989702	773338	675871	218	112
	2003	1047124	1101240	619742	218	175
	2004	1687322	1686266	649234	218	151
	2005	1675281	1603152	721363	218	151
	2006	1769093	1708806	782277	218	134
	2007	2162412	1964834	993749	220	157
	2008	1284097	1220549	1057297	382	164
	2009	1465462	1365512	962177	382	253
	2010	823204	932738	812422	382	226
	2011	943021	1087596	666363	382	279
	2012	742909	847426	562323	382	257
केरल	2002	816701	776841	632589	275	275
	2003	810292	828365	614516	276	276
	2004	794539	795859	613196	277	276

	2005	830136	823423	646852	278	254
	2006	746292	738019	655125	278	277
	2007	814731	766086	703770	278	268
	2008	908403	865924	746249	278	256
	2009	967278	943806	769721	278	276
	2010	994807	1008250	756278	278	271
	2011	922762	851458	827582	278	259
	2012	1136115	966437	997260	281	259
	2002	1156	1135	198	6	4
	2003	1157	1211	125	6	4
	2004	1410	1294	207	6	2
	2005	2345	2115	392	6	5
	2006	2111	2025	392	6	5
सिक्किम	2007	2374	2238	441	6	4
	2008	2414	2147	630	6	3
	2009	2025	1871	686	6	4
	2010	2051	2011	596	6	3
	2011	2229	2195	539	6	3
	2012	2483	2477	483	8	6
	2002	873442	731898	2915996	492	413
	2003	1112521	867435	3161082	500	419
	2004	1148122	855368	3565198	498	425
	2005	1124536	1168284	3521450	592	547
	2006	1515065	2551017	2654339	611	549
गुजरात	2007	1146807	1601336	2199810	591	539
	2008	1050073	1268947	1980936	656	621
	2009	1050618	1125988	1905566	670	569
	2010	1137288	1114884	1927970	749	671
	2011	918316	923731	1922555	1351	673
	2012	927658	922324	1927889	1351	859
	2002	**7097862**	**6251427**	**10615649**	**4829**	**3915**
	2003	**7205082**	**6641185**	**11176174**	**4865**	**3910**

संपूर्ण	2004	7897841	6970801	12310452	4888	4148
	2005	8613733	7970598	12895816	5006	4075
	2006	8653011	9619773	12098821	5161	4322
	2007	8235159	8450513	12019242	5474	4206
	2008	7596216	7552298	11979349	5777	4763
	2009	7677346	7729337	11794759	5970	5048
	2010	7586508	7935352	11374909	6202	5091
	2011	7633151	8262780	10767751	6953	5217
	2012	7713130	7928238	10544695	7157	5436

उपाबंध -V : 2010-12 में औसत कुल संस्थान, निपटान और विचाराधीनता के रूप में 2010-12 में यातायात और पुलिस चालान का औसत संस्थापन, निपटान और विचाराधीनता

	कुल आंकड़ा			यातायात चालान/पुलिस चालान			परक्राम्य लिखत अधिनियम			कुल टीसी/पीसी का %			कुल परक्रम्य लिखत अधिनियम का %		
उच्च न्यायालय	संस्थापन	निपटान	विचाराधीनता	संस्थापन	निपटान	विचाराधीनता	संस्थापन	निपटान	विचाराधीनता	संस्थापन	निपटान	विचाराधीनता	संस्थापन	निपटान	विचाराधीनता
बम्बई	1703648.7	2123339	2556314	785504	1021681	1131571	0	0	0	46.1	48.1	44.2	0	0	0
गुजरात	994420.7	986979.7	1927889	572839	549857.3	834906	129298	99473.3	291432	57.9	56	43.3	12.4	10.0	15.1
कर्नाटक	545049.7	517637.3	847168	0	0	0	120815.3	132916.7	180917	0	0	0	22.6	26.0	21.4
चंडीगढ़	120147.7	135214.7	42322	77463.7	79886.7	13733	8668	21904	9037	65.8	60.4	32.4	7.5	16.2	21.4
हरियाणा	478597	489244.7	454861	206005.3	206136.7	92084	34541.7	36098.7	57924	44	42.7	20.2	7.8	7.9	12.7
पंजाब	536907.3	554523.3	443978	262370.7	262298.3	87712	35409	46448.7	47928	48.4	46.9	19.8	7	8.9	10.8
झारखंड	92309.7	93836.7	238897	4425.7	4075	6552	4324.3	2962.7	12522	4.8	4.4	2.7	4.7	3.2	5.2
हिमाचल प्रदेश	209820.7	189275	198001	88642.7	87623.7	36774	7984.3	6449.3	12994	43.4	46.7	18.6	3.9	3.5	6.6
जम्मू एवं कश्मीर	231160.7	230208.3	153111	84278	87488.7	35265	1947.3	1442	5523	36.5	38.1	23.0	0.8	0.6	3.6
सिक्किम	2254.3	2227.7	483	493.66667	493.3	0	23	15	66	21.8	22.1	0	1	0.7	13.7
बिहार	312657.7	238322.7	1453583	145863	105961	754408	1361.7	447.7	6553	46.6	44.5	51. 9	0.4	0.2	0.5
आंध्र प्रदेश	476209.7	491183.7	763455	134717.3	134733.7	273189	46361.3	49479	77183	28.3	27.4	35.8	9.7	10.0	10.1
उत्तराखंड	179116.3	185999	143947	55977.3	75951	51585	5870.3	5863.3	14241	31.7	39.2	35.8	3.4	3.3	9.9
केरल	1017894.7	942048.3	997260	252908.3	232177	134268	54338.7	61695.3	7291	24.8	24.7	13.5	5.8	7.0	0.8
कुल	**6900194.7**	**7180040**	**9224009**	**2671488.7**	**2848363**	**3452047**	**450943**	**465195.7**	**723611**	**38.7**	**39.7**	**37.4**	**6.5**	**6.5**	**7.8**